ISSN : 2321-3922
अक्टूबर–2014

संभाव्य

हिंदी त्रैमासिक

www.sambhavya.com

सृजन एवं समीक्षा के लिए प्रतिबद्ध पत्रिका

ISSN - 2321-3922

संभाव्य

(सृजन एवं समीक्षा के लिए प्रतिबद्ध पत्रिका)

अक्टूबर–2014

संस्थापक–सह–प्रबंध संपादक
श्री दयानन्द जायसवाल

संयोजक
श्री विजय कुमार सिंह

संरक्षक
श्रीमती प्रतिभा सिन्हा

सम्पादक
डॉ. अश्विनी
डॉ. जी.पी. सिंह

संस्थापक सदस्य
डॉ. राम किशोर शर्मा
श्री उमाकान्त भारती

स्थायी सदस्य
श्री अजय कुमार सिंह
श्री धनञ्जय प्रसाद मण्डल 'अजित'
श्री सत्यदेवेश प्रसाद
श्रीमती संयुक्ता गुप्ता
श्री शिवनन्दन प्रसाद सिंह

संपादन, संचालन, प्रबंधन एवं समस्त व्यवस्था अवैतनिक एवं अव्यावसायिक। रचनाओं के लिए रचनाकार स्वयं उत्तरदायी। समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र भागलपुर।

सम्पर्क : श्री दयानन्द जायसवाल
मौर्या जुबिली प्लेस, जीरोमाईल
भागलपुर–813210 (बिहार)
मो० : 09931240303, 09570838880
वेबसाईट : www.sambhavya.com
ई–मेल : dnj.sambhavya@gmail.com

संभाव्य

हिंदी त्रैमासिक

वेबसाईट : www.sambhavya.com

आमंत्रण

'संभाव्य' अंतराष्ट्रीय स्तर की पूर्णतः नि:शुल्क हिंदी त्रैमासिक है। वर्तमान समय में विश्व के 48 देशों के पाठक सहित भारत के 80 शहरों के सहृदयों का स्नेह इस पत्रिका को प्राप्त है।

इसका ई–संस्करण विश्वग्राम के सभी सुधी पाठकों एवं स्नेहीजन के लिए www.sambhavya.com पर सहजता के साथ सुलभ है। मुद्रित संस्करण यथासंभव रचनाकारों, हिंदी के लिए समर्पित संस्था और संस्थानों को उपलब्ध कराया जाता है।

श्रेष्ठ चिंतन को सहज–सरल अभिव्यक्ति के माध्यम से जब कोई व्यक्ति सार्वभौम होकर जन–गण में व्याप्त हो जाता है तब वह व्यक्ति से व्यक्तित्व और व्यक्तित्व से संस्थान बन जाता है। ऐसे महान विभूतियों से आग्रह है कि जनवरी–2015 अंक में प्रकाशन हेतु अपनी मौलिक, नवीनतम एवं प्रतिनिधि रनचाएं अपने पत्राचार के पता के साथ मेल करें।

आइये सब मिलकर सामाजिक सरोकार से संबंधित सार्वभौम, सार्वजनीन एवं श्रेष्ठ साहित्य के माध्यम से धर्म–मज़हब, जाति, लिंग, वर्ण, वर्ग और नस्ल–भेद की दीवार हँटा दें और सिर्फ इंसान बनें तथा उत्तम ज्ञान एवं श्रेष्ठ आचरण से स्वयं का परिष्कार कर विश्वग्राम का सौभाग्य बनें।

रचनाएं भेजें :–
E-mail : dnj.sambhavya@gmail.com
E-mail : gpsingh@sambhavya.com

डॉ0 अश्विनी
संपादक, संभाव्य

डॉ0 जी.पी. सिंह
संपादक, संभाव्य

संभाव्य

ISSN - 2321-3922

अनुक्रम

1	पुरोवाक्	संस्थापक की कमल से	श्री दयानन्द जायसवाल	5
2	आलेख	एकता की कड़ी: राष्ट्रभाषा हिन्दी।	डॉ. संजय बी. आसोदरिया	6
3	कविता	हिंदी तेरी महिमा भी क्या कहूँ...	शशांक सौरभ	8
4	कविता	हिन्द देश	डॉ0 अलका अग्रवाल	8
5	कहानी	उसे खिलना ही था...	राजा राम सिंह	9
6	कहानी	किन्तु मैं हारुँगी नहीं	नीरजा हेमेन्द्र	15
7	कविता	बिखरे सपने	डा0 रामकिशोर शर्मा,	18
8	कविताएँ	एक देश है, चिड़िया, आतंक के जगल में, भूख	डॉ0 अश्विनी	19
9	कविता	आयी चंद्रिका धवल	अन्नपूर्णा बाजपेयी	20
10	कविता	विवाद	आशीष बिहानी	20
11	कविता	इंतजार में.....	शत्दल मंजरी	21
12	कविता	फिर सड़क पर	सरिता दास	21
13	कविता	मुक्तक ऐसा रच...	तरुण जैन	22
14	कविता	त्रिगुणातीत होने का गर्व	आशीष बिहानी	22
15	कविता	विश्वास	सुमित्रा पारीक	23
16	कविता	सोच सारी...	डा. मनाजिर आशिफ हरगानवी	23
17	कविता	तब तुम मुझको याद करोगी	बृजेश नीरज	23
18	गीत	सच को अपनाने का	अभिनव अरुण	24
19	गजल	कभी किसी का शोर मचाना	डॉ0 कमलेश द्विवेदी	24
20	गजल	क्या होगा...	अशोक मिज़ाज	25
21	लघुकथा	घड़ी की सुई	डॉ. अनुज प्रभात	26
22	लघुकथा	बदलाव	उमाकांत भारती	27
23	लघुकथा	उत्कर्ष	महेन्द्र मयंक	28
24	समीक्षा	आमार सोनार बांग्ला	दयानन्द जायसवाल	30
25	समीक्षा	रामविलास शर्मा का सौन्दर्य दर्शन	डॉ0 आनन्द कुमार	32
26	समीक्षात्मक विवेचन	सार्वदेशीय मानवीय–मूल्यों का पतन: संक्षिप्त विश्लेषण	डॉ० अचल भारती	34
27	क्षणिका	ज़िन्दगी !	डा0 मञ्जरी पाण्डेय	35
28	समीक्षा	कवि रहीम : एक सामाजिक चिंतक	डॉ. सुनील कुमार परीट	36
29	आलेख	आवरण	अरुण कुमार सिंह	38
30	आलेख	प्रगतिशील साहित्यिक आन्दोलन और रामविलास शर्मा	किरण देवी	40
31	आलेख	भारतरत्न लौहपुरूष सरदार वल्लभ भाई पटेल	राजू प्रसाद कुसुम	44
32	लोकवाणी			47

परिचय

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

एक दिन देखा वही नंग–धड़ंग बच्चा
धूल में बैठा है अपने दोनो पैरों को पसारे
नदी तट पर मिट्टी के ढ़ेले चुनकर
उसकी दीदी मल रही है लोटे को घुमा–घुमाकर
नज़दीक ही कोमल रोएँवाला एक बकरी का बच्चा
धीरे–धीरे चरता फिर रहा था उसी नदी के किनारे
अचानक वह नज़दीक आकर खड़ा हो
बच्चे की मुँह की ओर देखकर चिल्ला उठा
बच्चा चौंका, काँपा, डर से रो उठा
दीदी घाट पर ही लोटा छोड़कर दौड़ी
एक तरफ भाई को लिये, दूसरे में बकरी के बच्चे को
दोनों में प्यार बराबर बाँट दिया
जानबर का बच्चा और आदमी का बच्चा
बीच में पकड़कर दीदी ने दोनो को
परिचय की डोर में बाँध दिया।

हिन्दी अनुवाद : रामवृक्ष बेनीपुरी
(चित्रा में)

पुरोवाक्

संस्थापक की कलम से

जीवन की सफलताएँ उस वीर को वरण करती हैं जो स्वयं पृथ्वी खोदकर, पानी निकाल कर, अपनी तृष्णा शांत करने की क्षमता रखता है। कायर, भीरु निरुद्योगी, अनुत्साही, अकर्मण्य और आलसी व्यक्ति स्वयं अपने हाथ–पैर न हिलाकर भाग्य और विधाता को, ईश्वर और समय को जीवन भर दोष दिया करते हैं। रोना–झींकना ही उसका स्वभाव बन जाता है। पग–पग पर उन्हें विपत्तियों का सामना करना पड़ता है, असफलताएँ और अभाव उसके जीवन को जर्जर बना देता है।

व्यक्ति जब अपने स्वार्थ साधन से उपर उठ जाता है तभी वह समाज, देश एवं विश्व का कल्याण भी कर पाता है। अपनी कठोर साधनाओं के फलस्वरुप राजनीति में नये सिद्धान्तों का प्रतिपादन करता है और नया मोड़ उपस्थित कर देता है। अपनी अनवरत तपस्या के परिणाम स्वरुप ही एक विद्वान नवीन साहित्य का सृजन करता है जो 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की कसौटी पर खरा उतरता हुआ मानव, देश और विश्व का कल्याण करता है। उनके मस्तिष्क के नवीन सृजन और कृतियाँ केवल उनके लिए नहीं होती बल्कि, देश और समाज उत्थान, अभ्युदय और समृद्धि के लिए होती है; तब ही एक विश्वग्राम की कल्पना पूरी होती है।

हम विगत पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करें तो निःसंदेह यह विदित हो जायगा कि पूँजीवाद, वर्ण–भेद, जाति–भेद, साम्राज्यवाद आदि विचार धाराएँ ही मानव की स्वार्थ लोलुपता और शोषण की प्रवृत्ति को भड़काती है, उसे युद्ध के लिए प्रेरित करती है और युद्ध संपूर्ण मानव–सभ्यता और समाज का विनाश कर देता है। आज का युद्ध और विज्ञान मानव विकास के साधन बनकर विनाश के साधन बने हुए हैं। यदि युद्ध का सभी राष्ट्रों नें पूर्णतः वहिष्कार नहीं किया तो परिणाम इतना भयंकर होगा कि विजित के साथ–साथ विजेता भी सर्वनाश की आँधी नें उड़ जायगा। इसलिए विश्व के सभी राष्ट्र ने किसी न किसी रुप में युद्ध विराम की योजनाएँ तैयार करें क्योंकि 'प्रेम और अहिंसा द्वारा विश्व के कठोर से कठोर हृदय को भी कोमल बनाया जा सकता है। माना कि व्यक्ति आज अधिक सुशिक्षित–प्रशिक्षित हैं, जीवन–जगत से अधिक सचेत और सचेष्ट हैं किन्तु ये सारी योग्यताएँ, स्पृहणीय विशेषताएँ उसे अधिकाधिक खुद–गर्ज बनाती है।

व्यक्ति चेतन अथवा अचेतन रुप में सामाजिक संस्कारों से बंधा होता है। जन मानस के नये बोध एवं स्थायीभाव साहित्कार को भी प्रभावित करता है, क्योंकि वह तो समाज का जागरुक, संवेदनशील एवं चेतना संपन्न प्राणी होता है। विशाल हृदय का स्वामी साहित्यकार अपने देशवासियों से ही नहीं, वरण् संपूर्ण जनमानस से प्रेम करता है और वह सभी मनुष्यों के लिए जीता है। मानवीय मूल्यों, उदार और उदात्त नैतिकता की तलाशकर हमारी बुद्धिगत ज्ञान, संवेदनाओं और भावनाओं से जोड़ते हैं।

जम्मू–कश्मीर के जल प्रलय का दृश्य, चारों ओर अफरा–तफरी का माहौल, चीखते–पुकारते पानी में बहते अपनी जान बचाने का विफल प्रयास करते लोग, बाढ़ की कहर से टूटती सड़कें, खाद्य–सामग्री की पहुँच से दूर तड़पते–विलखते लोग एवं तेज जल–प्रवाह में डूबती–उतराती लोगों की दर्दीली आवाजें मानवीय संवेदनाओं को झकझोर दी है। अतएव सम्पूर्ण मानवता की रक्षा के लिए विश्व समुदाय हो खुलकर मानवता की रक्षा करनी होगी।

संभाव्य से जुड़े सभी रचनाकार के हृदय की समस्त वृत्तियाँ निरन्तर अपने चरम आदर्श की ओर बढ़ती रहती है। जिस प्रकार की सागर सहलाता है, लहराता है, पर अपने को मुक्त रखता है। विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि इनकी सूक्ष्म काव्य–चेतना मूर्त्त उपकरणों द्वारा इस प्रकार व्यंजित किया गया है कि यह मानव मात्र के हृदय को तल्लीन करने में सक्षम हो सके। इसकी रचनाओं में सच्चाई और सरलता की खनक है, जो जन मानस की जिन्दगी और नियति के साथ रचनाकार के गहरे जुराव से आती है।

'संभाव्य' अपने रुप शिल्प के आधार पर इस रचना प्रक्रिया के द्वारा हर प्रगतिशील चिन्तकों, लेखकों, समीक्षकों एवं कवियों की कलात्मक अभिव्यक्ति उच्च मनोवैज्ञानिक स्तर पर आपके सामने प्रस्तुत करती है।

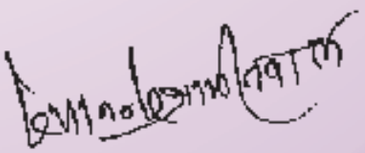

आलेख

एकता की कड़ीः राष्ट्रभाषा हिन्दी

डॉ. संजय बी. आसोदरिया
एसोसिएट प्रोफेसर एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष,
राजकोट , गुजरात
मोबाईल : 9586505380

'हिन्दी है राष्ट्रभाषा हमारी, वतन जैसा है प्यारी
गौरवशाली भारत हमारा अनेकता में एकता हमारी' ।

हर राष्ट्र का अपना एक चिंतन होता है, जिसे वह अपनी भाषा में व्यक्त करता है। भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं होती, बल्कि उससे बहुवर्ग की संस्कृति एवं संस्कार जुड़े होते हैं। इसलिए प्रत्येक स्वतंत्र देश की एक राजभाषा होती है। वह भाषा देश के अधिक से अधिक लोगों द्वारा बोली, लिखी और समझी जाती है। जो जनभाषा एवं राजभाषा के तौर पर पूरे देश को एकता के सूत्र में बाँधती है। हमारे देश में यह गौरव हिन्दी भाषा को प्राप्त है। 'हिन्दी' हिन्दुस्तान की पहचान है। वैसे भारत में असंख्य भाषाएँ बोली जाती है, परंतु हिन्दी इन सब में विशिष्ट है। इस भाषा के माध्यम से पूरा भारत आपस में जुड़ा हुआ है। इस दृष्टि से देखे तो हिन्दी हमारी शान एवं शोभा है। हिन्दी एकता, अखण्डता एवं समन्वय की भाषा है।

विद्वानों के अनुसार राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में भाषा एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हमारे देश के साधु-संतों ने देश भ्रमण करके भाषायी एकता का प्रचार-प्रसार किया था। मध्यकालीन कवियों एवं संतों ने भी हिन्दी को अपना माध्यम बनाकर साहित्य सृजन किया था। कबीर, सूरदास, जायसी, तुलसीदास आदि कवियों ने अपने विचारों को हिन्दी भाषा के द्वारा ही व्यक्त किया है। तुलसी का मानस केवल सांस्कृतिक विजय का काव्य नहीं है, बल्कि उसमें समूचे भारत की अखण्डता और एकता का विश्वास तथा प्रेम व्याप्त है। रसखान ने हिन्दी में प्रेम की बंशी बजाकर सूर की तरह एकता की रसधारा बहायी है। इनके अतिरिक्त प्रांतीय कवियों ने अपने उपदेश को देशव्यापी अभिव्यक्ति देने के लिए जैसे, बंगाल के चैतन्य महाप्रभु, असम के शंकर देव, नारायण देव, पंजाब के गुरुनानक देव, गुजरात के नरंसी मेहता, दयाराम, महाराष्ट्र के नामदेव आदि ने हिन्दी को ही अपनाया।

हिन्दी न केवल साधु, संतों और कवियों की भाषा रही है, बल्कि स्वाधीनता संग्राम में हिन्दी भाषा की बड़ी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। देश विभिन्न जातियों और धर्मों में बटाँ हुआ था। उस समय स्वतंत्रता सेनानियों को ऐसी भाषा की आवश्यकता महसूस हुई, जो उन्हें एकता के सूत्र में पिरो सके और जन-जन की भाषा बन जाये। हिन्दी भाषा में उन्हें ऐसे गुण नज़र आए। फिर क्या था, सामूहिक प्रयासों के फलस्वरूप हिन्दी जन-जन की भाषा बन गई। उस समय जो भी राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आंदोलन हुए उन सभी की अभिव्यक्ति का एक मात्र साधन हिन्दी भाषा रही। महात्मा गाँधी जैसे महान नेताओं ने स्वीकारा कि हिन्दी ही ऐसी सशक्त भाषा है जो देश के विभिन्न सूत्रों को जोड़ने में एक भाषा बन सकती है। इस प्रकार महात्मा गाँधी से लेकर काका कालेलकर तथा लोकमान्य तिलक से लेकर मदनमोहन मालवीय तक के राष्ट्रीय नेता ने हिन्दुस्तानी प्रजा को जागृत करने हिन्दी भाषा को स्वीकारा था। वे जानते थे कि हिन्दी में ही वह शक्ति है जो पूरे देश के नागरिकों को एकसूत्र में पिरो सकती है।

राजाराममोहनराय, दयानंद सरस्वती आदि संस्थापकों ने अपने विचार हिन्दी में प्रस्तुत किये हैं। हिन्दी उनके विचारों की वाहक थी। आर्य समाज के संस्थापक दयानंद सरस्वती ने अपनी धर्म पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' ई. 1875 में लिखी और आर्य समाज का प्रचार देशभर में हिन्दी में ही किया। इस प्रकार हिन्दी मध्यकाल से लेकर स्वाधीनता संग्राम तक और उसके पश्चात् आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, जितनी उस समय थी।

आधुनिक कवि रामधारीसिंह दिनकर ने ठीक ही कहा है -'हिन्दी तोड़नेवाली नहीं, जोड़नेवाली भाषा है।' आज हिन्दी भाषा पूरे देश को एक सूत्र में बाँधकर विदेशों में फैल रही है। यही कारण है कि संसार में बोली जानेवाली भाषाओं में हिन्दी का दूसरा स्थान है। आज भाषा के क्षेत्र में हिन्दी 'वसुधैव कुटुंबकम्' की संकल्पना को साकार कर रही है। हिन्दी भाषा राष्ट्रीयता से बढ़कर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुँच चुकी है। आने वाले दिनों में हिन्दी विश्व भाषा बन कर पूरे संसार को एकता के सूत्र में बाँध दे तो कोई

आश्चर्य नहीं होगा।

भूतपूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह के शब्दों में ''हिन्दी ही एकमात्र भाषा है जो समूचे देश को एक कड़ी में पिरोती है। अगर हिन्दी कमजोर होती है, तो देश कमजोर होगा अगर हिन्दी मजबूत हुई तो देश की एकता, अखंडता मजबूत होगी।''

विभिन्न भाषा–भाषी, धर्म–संप्रदाय एवं संस्कृतियों की वाहक हिन्दी भाषा राजभाषा के रूप में एक समन्वयात्मक भाषा है, जो भारतीय परंपरा और विरासत के युगबोध को आधुनिक युग धारा से जोड़कर अपना एक विशाल भारतीय भाषायी चरित्र प्रस्तुत करती है। हिन्दी भाषा सच्चे अर्थो में भारतीय अस्मिता का आईना है, राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है। हिन्दी सभी प्रादेशिक भाषाओं तथा आँचलिक भाषाओं का बृहत्तर रूप है। इसलिए हिन्दी समस्त राष्ट्र की एकता की कड़ी एवं अखंडता की नींव है। राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता के सूत्र में सबको आबद्ध करने का श्रेय केवल हिन्दी भाषा को ही है। हिन्दी को चाहे राष्ट्रभाषा, संपर्क भाषा, जन भाषा कुछ भी कह लें, परंतु आधुनिक व्यापक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी की स्थिति अब नया ग्लोबल विश्वस्तरीय परिदृश्य प्रस्तुत कर रही है। असल में हिन्दी ही राष्ट्रीय एकता का एकमात्र ऐसा सेतू है, जो भारतीय एकता को अपनी विविधता भरी अनेकता में एकता का संदेश देती है।

संप्रति अबाल बृद्ध सबको एक सूत्र में जोड़ने में प्रिन्ट मीडिया एवं इलेक्टोनिक्स मीडिया ने अहम भूमिका निबाही हैं। प्रिन्ट मीडिया में समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ आती हैं। जन सामान्य की जिज्ञासा में वृद्धि के कारण हिन्दी समाचार पत्रों की संख्या में काफी बढ़ोत्तरी हुई है। इलेक्ट्रोनिक मीडिया में आकाशवाणी, दूरदर्शन, एवं इन्टरनेट पर भी हिन्दी का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। आकाशवाणी केन्द्रों पर से हिन्दी में निरंतर समाचार, नाटक, हिन्दी प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा हिन्दी वार्तालाप प्रसारित किये जाते रहे हैं। दूरदर्शन जैसे राष्ट्रीय चैनलों पर से हिन्दी में पर्याप्त मात्रा में कार्यक्रम प्रसारित किये जाते हैं। हिन्दी फिल्में और हिन्दी गीत तो विश्वभर के लिए मनोरंजन का साधन रहे हैं। फिल्मों के कारण हिन्दी का प्रसार हुआ है। अंग्रेजी फिल्मों का हिन्दीकरण हो रहा है। अर्थात् सिनेमा में भी हिन्दी का प्रचलन बढ़ा है। यहाँ तक की दूसरी भाषा की आंतरराष्ट्रीय फिल्में भी हिन्दी भाषा में प्रसारित होने लगी हैं। इस दृष्टि से देखें तो राजभाषा हिन्दी के विश्व पटल पर बढ़ते कदम हिन्दी को विश्व भाषा बनाने में संजीवनी का काम करेंगे।

हिन्दी केवल हमारी राजभाषा ही नहीं है, अपितु इस देश की संस्कृति, सभ्यता और विकास का सुनहरा आईना है। इस आईने में देश की एकरूपता की तश्वीर दृष्टिगोचर होती है। अंत में कहे तो हमें कोई शक नहीं कि हमारे देश की हिन्दी भाषा ने स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आज तक एकता की कड़ी के रूप में अपनी जिम्मेदारी अदा की है और करती रहेगी।

सिकन्दर एवं उनके गुरु अरस्तू दोनो एक बार किसी नदी के पार जाने वाले थे। नदी के किनारे पहुँचने पर सिकन्दर ने गुरु अरस्तू से कहा– 'अभी तक तो मैं पीछे–पीछे चल रहा था, अब मैं आगे चलूँगा और आप मेरे पीछे।' गुरु ने पुछा – ऐसा क्यों?' सिकन्दर ने कहा– 'यदि जल कहीं गहरा हुआ और मैं अपने को सम्भाल न सका, डूब गया तो आप सावधान हो जायेंगे और डूबने से बच जायेंगे। एक सिकन्दर डूबेगा तो अ।पके हजारों सिकन्दर जैसे शिष्य पुनः हो जाऐंगे, लेकिन एक अरस्तू डूब गये तो जीवित सिकन्दर भी मृततुल्य है।

कविता

हिंदी तेरी महिमा भी क्या कहूँ...

शशांक सौरभ

हिंदी तेरी महिमा भी क्या कहूँ मैं
तू मेरू की तरह विशाल है
तू गंगा की तरह पवित्र है
तुम किसी नदी की तरह बहती है..
तुझमें जल की शीतलता है..
तुझमें मिट्टी की खुशबू है..
तुम लेखकों की तलवार हो
वक्ताओं की ढाल हो ..

तू चुपचाप उतरती है हमारे कागजों पर
बिना किसी शिकायत के
मन में समेटे सारी बात
तुम अपनी खामोशी से ही कहती हो..
एक एहसास की तरह तुम मेरे साथ रहती हो

तुम मेरी कलम का दामन उस पल थामती हो
जब मैं निहत्था हताश होता हूँ..
मन के मरूस्थल में
तुम वो पुष्प हो जो मेरे मुख पे मुस्कान लाती है
अकेली अंधेरी रातों में
तुम मेरे लिए आशा की किरणें लाती हो...
अपने मर्म से मेरे घावों पे मरहम लगाती हो
मेरी वेदना तुममें स्वरबद्ध होकर निकलते है..
मेरी पीड़ा, मेरे हर्ष को सर्वप्रथम तुम समझ पाती हो

हिंदी तुम मेरी आत्मा का वो अभिन्न अंग हो
जो मेरे साथ ही इस जग में आया था
और साथ ही इसके धरती में विलीन हो जाएगा...
हिंदी तेरी महिमा भी क्या कहूं मैं,
तू मेरू की तरह विशाल है...
तू गंगा की तरह पवित्र है।

कविता

हिन्द देश

डॉ0 अलका अग्रवाल
ऐसोसियेट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग
मो0–08979102840
चन्दौसी (उत्तर प्रदेश)

हिन्द की उत्ताल तरंगें हों या हो हिमाद्रि के उत्तंग शिखर
ऊँचा रहे मस्तक सदा और धरती पर भी जड़ें को गहरी
गंगा–जमुना की पावन धारा, करे नमन जिस देवभूमि को
ऋषि–मुनि करने को धन्य स्वयं को चुनते इसी तपोभूमि को
नाचे–शिव, रास रचाया कन्हैंया ने और राम ने भी विवाह किया
सीता, पार्वती, राधा और मीरा भी जन्म पाईं इसी जमीं पर
कभी दानव हुए भस्म तो कभी काली ने संहार किया
चढ़ शीश पे कालिया के कृष्ण ने भी मर्दन किया
गांधी, आजाद और पटेल लड़े आजादी को भारत माँ की
सुभाष, भगतसिंह और अशफाक ने भी चूमा मौत को
लक्ष्मी, अहिल्या और पद्मिनी का बलिदान रंग दिखा गया
भारत की संतानों ने फर्ज को अपनी खूबी से अंजाम दिया
नानक, कबीर और तुलसी ने ज्ञान से सींचा इस भूमि को
गीता, रामायण और महाभारत में समाया पूरा जीवन सार
टैगोर, भाभा और कलाम ने बढ़ाई देश की शान
सचिन, लता और अभिनव भी बढ़ा रहे अब इसका मान
देश है ये प्यारा, हर रंग–रुप, भाषा और धर्म का रखवाला
जाति वर्ग भेद भी न बाँट सके इसकी एकता को
हर बात पर लड़ने वाले भाई–बहन हो जाते विपत्ति में एक
खून के प्यासे दरिंदे कर नहीं सकते अब इसके टुकड़े अनेक
कांटे इस सुंदर फूल के भले रहे घेरें इसे चारों ओर से
तोड़ने बढ़े किसी बाहरी हाथ को चुभेंगे ये किसी शूल से
नज़र जो उठेगी इस भाल पे हर उस आँख को भेद देंगे
कसम हैं ये भारत के हर सपूत की देश पे जां न्यौछावर कर देंगें।

कहानी

उसे खिलना ही था...

राजा राम सिंह
कानपुर रोड, लखनऊ
मो0 : 9415200724

वह उद्दिग्न था, उलझन में था। अनिर्णय की स्थिति हावी थी। उसकी यह स्थिति काफी दिनों से थी। रोज तैयारी करके आता था, कि आज वह अपनी बात कह देगा, परन्तु उसके दिखते ही, सारा मन ही मन में किया अभ्यास रेत की तरह ढह जाता था, और निर्णय कल के लिए टल जाता था।

अनजाने, अनचाहे वह उससे प्यार करने लगा था। निश्चय ही एक तरफा प्यार। उसे शायद पता ही नहीं था कि कोई उसे चाह रहा है। दिल ही दिल में किसी को बहुत प्यार करना नाकाफी हैं, समय–समय पर प्यार प्रदर्शन भी आवश्यक है। उसे पता चले कि कोई उसे बहुत चाहता है।

उसी ने उसकी ज्वाइनिंग की सारी औपचारिकतांए पूरी करवाई थी। वह क्षेत्रीय प्रबन्धक मि0 सहाय की पी0ए0 थी, व्यक्तिगत सहायक थी, मिस मेहविश खान। वह रमन शुक्ला, सहायक प्रबन्धक के पद इस इंश्योरेंस कम्पनी में नियुक्ति हुआ था। मि0 सहाय के आदेश पर ही उसने उसका परिचय बाकी स्टाफ से करवाया था, उसका केबिन उसके चेम्बर के सामने ही पड़ता था, इसलिए अक्सर उसकी निगाह उसके ऊपर पड़ती रहती थी।

उससे सबको काम ही पड़ता था। अनावश्यक वह बोल नहीं पाता था, इसलिए वह उससे परिचित नहीं हो पाया था। वह बहुत कम बोलती थी और इतना धीमे कि पास वाला व्यक्ति ही सुन पाये। शायद उसका किसी से भी परिचय नहीं था, या सबके लिए वह अजनबी थी। वह समय से 5 मिनट पहले आ जाती थी और नियत समय पर वह उठ कर चल देती थी। उसकी हाय! हेलो! भी शायद किसी से नहीं होती थी। वह अपने केबिन से उठकर सिर्फ सहाय साहब के पास ही जाती थी। ऑफिस के अन्य कर्मचारी भी उसके पास आते थे तो कुछेक मिनट ही रुकते थे।

रमन ने उसे कभी खुश नहीं देखा था। खामोशी उसका स्वभाव था और उदासी उसका अस्तित्व। परन्तु वह दुखी नहीं लगती थी। शान्त एवं संयत नजर आती थी। हर समय व्यस्त, कम्प्यूटर, प्रिंटर, फैक्स या इन्टरकॉम पर की–बोर्ड पर उसकी अंगुलियाँ ऐसे चलती थी मानों पानी पर मछलियाँ तैर रहीं हो।

उसे वह सफेद गुलाब लगती थीं, जो खिलकर मुरझा रहा था या जो अभी ठीक से खिल ही ना पाया हो। जिसकी महक न हो अगर है भी तो अन्तरनिहित। किन्तु वह उदासी में भी खूबसुरत लगती थी। खामोशी, उदासी एवं खूबसूरती का संगम थी वह। उसका यह व्यक्तित्व ऐसे वातावरण, परिवेश का निर्माण करता था, जो उससे अनौपचारिक परिचय प्राप्त करने में अप्रासंगिक लगता था।

काफी दिनों से रमन महसूस कर रहा था कि उसकी खामोशी उसे खामोश रखती थी और उसकी उदासी उसे उदास कर रही थी। वह उसके प्रति काफी संवेदनशील हो गया था और भावुक भी। उसे लगता था कि वह अभिशप्त है, परन्तु उसके पास अभिव्यक्ति का संकट था।

'वैसे, एक बात पूछूं..... 'इफ यू डोंट माइण्ड?' रमन ने हिचकिचाते हुये कहा..... मैं आपसे शादी करना चाहता हूँ। वह अकचकायी। यह बात उसके लिए अविश्वसनीय और अकल्पनीय थी और कुछ हद तक अप्रांसगिक भी।

'किन्तु..... मुझे तो शादी हीं नहीं करना है।' उसने मंतव्य जाहिर किया या दार्शनिकता प्रदर्शित की परन्तु रुख दृढ़ था।

'क्यों?' उसे कोई हंगामा न होने से उत्साह मिला था।' सोंच लो!'..... मेरा प्रस्ताव हरदम के लिए है..... मैं इन्तजार करता रहूँगा.....। उसने अपना निर्णय उस पर आयत कर दिया था। मिस खान ने कोई उत्तर नहीं दिया था, सिर्फ उसकी तरफ ताकती रह गयी थी, निर्लिप्त, निर्विकार। वह उसे कुछ वक्त परखता रहा था और निःशब्द वापस लौट आया था, अपने चैम्बर में।

दो मिनट से भी कम समय का वाक्या था किसी को आभास नहीं हुआ था कि उन दोनों के बीच इतना गम्भीर कुछ घटित हो चुका है। उसने किसी से जिक्र नहीं किया था और मिस खान का तो सवाल हीं नहीं उठता था।

इस बात के भी तीन–चार महीने गुजर चुके थे परन्तु कोई सकारात्मक संकेत नहीं मिल रहे थे। ऊपरी तौर पर सब कुछ सामान्य सा था। परन्तु शनैः–शनैः दुख, उदासी, खलिश बेचैनी और कुद हद तक गम उसमें घर कर रही थीं। जब उसने प्रपोज करने की हिमाकत की थी तब वह आत्ममुग्धता के नशें में था या कुछ हद तक अहंकार में भी। अब उसका हर दिन एक युद्ध में परिवर्तित हो चुका था उसकी भावनाओं और वास्तविकताओं से।

मेहविश के भी शान्त, स्थिर एकाकी जीवन में भी कुछ

हलचल हो रही थी, जो वाह्य रुप से प्रगट नहीं हो रही थी, परन्तु वह खुद महसूस कर रही थी। उसको यह बड़ा विस्मित करने वाला लगता था कि वे एक दूसरे को ठीक से जानते भी नहीं है और कोई जिन्दगी का ऐसा प्रस्ताव कैसे रख सकता है? कभी उन में खुल कर कोई भी, किसी तरह की बात नहीं हुई। न प्यार का इजहार, न पंसदगी की झलक। कोई ऐसे कैसे कर सकता है? यकायक। उसे यकीन नहीं आ रहा था कि ऐसा भी घटित हुआ है। उसके साथ ही ऐसा क्यों होता है? क्या इतिहास दोहराने जा रहा है। नहीं, वह घटनाओं की पुनरावृति नहीं होने देगी। अपने ढंग से अपना जीवन जीने का साहस उसके अवचेतन में कहीं न कहीं मौजूद है, उसमें वह किसी को हस्तक्षेप नहीं करने देगी। अपना स्वायत्त अस्तित्व बनायें रखना उसकी अब प्राथमिकता बन गयी थीं।

मनुष्य में अद्‌भूत क्षमतायें होती है, परन्तु फिर भी कई चीजें ऐसी हैं जो प्रयासों से नहीं मिल पाती हैं। उसने सहाय साहब से मिस खान का कान्टेक्ट नं0 मांगा, साहब ने मना कर दिया 'उसने किसी को भी देने को मना किया है। खुद क्यों नहीं उससे लेते?' इस संदर्भ में वह अपनी असफलता पहले ही भोग चुका था।

सुबह के नौ बजे थे और वह ऑफिस जाने की तैयारियों में व्यस्त था, कि उसका मोबाईल बज उठा। मेहविश थी, 'सर! आज ऑफिस नहीं आ पाऊँगी कृपया सहाय साहब को बतला दीजियेगा, साहब का फोन नहीं उठ रहा है।' वह आश्चर्यमिश्रित खुशी में आ गया था, उसका नम्बर अनजाने में मिल गया था। वह प्रत्युत्तर में कुछ पूछता की सेल बंद हो गया था।

उसने कई बार सोचा कि सेल से बात की जाये, परन्तु यथोचित साहस एकत्र नहीं कर पाया। उसने मोबाईल पर एक–आध संदेश भी भेजे परन्तु कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ। वह डर गया कि मिस खान उसे परेशान करने की शिकायत कहीं साहब से न कर दे? और वह हंसी का पात्र न बन जाये।

सहाय साहब दौरें पर गये थे तथा अन्य वरिष्ठ अधिकारी छुट्‌टी पर या क्लाइन्ट से व्यस्त थे। मिस खान को आज जल्दी घर जाना था। वह कश–म्–कश में थी, उससे कैसे कहे, कहीं वह अपना राग न छेड़ दे। अनुमति भी लेना था। वह अपने काम में व्यस्त था। वह नोटिश नहीं कर पाया कि मिस खान ने उसके चेम्बर में प्रवेश किया और अनुमति के लिए अनुरोध किया। वह उसे सीट आफर कर कुछ कहना चाहता था, परन्तु उसने इसका अवसर नहीं दिया और निकल गई, वह ठगा सा रह गया था। एक मौका आकर निकल गया था।

उसका कम्पनी में एक साल पूरा हो गया था और उसने स्टॉफ के लिए टी–पार्टी आयोजित की थी। मिस खान भी सम्मिलित हुई थीं औ उसने उसे विश भी किया था। वह पहली बार किसी पार्टी में शामिल हुई थीं। वह लंच भी अकेले ही करती थी अपने केबिन में। वह शामिल तो हुई थी परन्तु उनका अंदाज वहीं चिर–परिचित था, मातमी। उसे लगा सफेद गुलाब खिलना चाहता है, परन्तु घनीभूत उदासी अपना वर्चस्व बनायें हुई थी। कुछ ऐसा भी नहीं हुआ था, जो आश्वस्ति भरा हो लेकिन उस वक्त उसने उसका कोई खास मतलब निकालने की कोशिश नहीं की थीं।

रमन के अन्दर एक अजीब व्याकुलता भर गयी थी, अकथ एवं अव्यक्त। उसके अन्दर एक जिद पनप रही थी, उस एकाकी, खामोश, उदासी से परिपूर्ण सफेद गुलाब को गुलाबी में बदलनें को आतुर और उसकी खुशबू जो कि अर्न्तनिहित थी उसे अपने अन्तःकरण में समाहित, व्याप्त कर लेने की जिद।

रविवार की शाम को मॉल से सिनेमा देखकर वापस सेवेन्थ फ्लोर से उतर रहा था कि थर्ड फ्लोर पर उसने मिस खान को देखा। वह एकदम से उसके सामने आ गया था, वह अकचकायी और विस्मित हुयी। उसके साथ एक स्त्री और थी।

'अरे! आप यहाँ कहाँ? उसकी आँखों में एक चमक उभरी और विलीन हो गई। उसने अपने सिनेमा देखने के विषय में बताया और उसने बिग बाजार से खरीद–फरोक्त के विषय में। साथ वाली स्त्री उसकी मेड थी, विमला।

उसने साथ में एक चाय पीने का ऑफर किया, परन्तु वह मना करती रही। किन्तु वह लगातार आग्रह करता रहा था। वह अनमने ढंग से तैयार हो गयी थी और वहीं के कैफे की तरफ तीनों बढ़ रहे थे कि मेड ने टोका 'यहाँ कहाँ पैसे बरबाद करेंगे, यहीं पास में घर है, वहीं चलते हैं, वहाँ बढ़िया चाय बनाकर पिलायेंगे, यहाँ ढंग की मिलती नहीं है।' ..... विमला ..... तुम भी ..... ? मिस खान उलझन में कसमसायी थी। वह तुरन्त सहमत हो गया' यह तो अति उत्तम है।' इसी बहाने मिस खान की घर भी देख लेंगे। तड़फी ..... मगर असहायता उस पर भारी पड़ी। ..... वह शायद स्पष्ट मना नहीं कर पा रही थी। रमन के लिए यह अव्याशित और कल्पना से परे था।

मॉल से निकलते ही, करीब सौ मीटर की दूरी पर ही उसका थ्री रुम फ्लेट था। विमला चाय बनाने में व्यस्त हो गयी थी और मिस खान उसके पास वाले एकल सोफे पर बैठी थी। वह बेचैन थी और अपने हाथ मसल रही थी। बात–चीत का सिलसिला चल निकला था जो कि परिचयात्मक था। उसने बताया कि वह यहाँ से 30–40 कि0 मी0 की दूरी पर रहता है, एक सिंगल रुम फ्लेट पर शेयरिंग बेसिस पर। परन्तु उसका रुम अपने ऑफिस के काफी पास है। रमन मौका नहीं छोड़ना चाहता था और उसने अति आतुरता में आना प्रस्ताव पुनः पेश कर दिया। .....

'मेहविश, क्या सोंचा है? मेरे प्रस्ताव के विषय में।'

'यह सम्भव नहीं है।'

'क्यों?'

'हम लोगों के धर्म अलग है, संस्कार अलग हैं।' हम लोगों

के घर वाले राजी नहीं होंगे। वह उत्साहित हुआ था कि कम से कम किसी से भी शादी न करने की जड़ता तो टूटी।

'मैं, आपकी इच्छा पूँछ रहा हूँ। आपको क्या लगता है? क्या यह अवरोध है?'

..... एक लम्बी चुप्पी, और वह आन्तरिक विचार–विमर्श में लीन फिर जोर कसा।

'आप मुझसे ही क्यों शादी करना चाहते हैं?' आपके लिए तो लड़कियों की कमी नहीं होगी।

'क्योंकि मैं तुमसे प्यार करने लगा हूँ।'

'हमलोग कभी मिले नहीं, साथ उठे–बैठे नहीं, एक–दूसरे को जाना पहचाना नहीं और प्यार हो गया।

'प्यार होना होता है तो एक पल में हो जाता है, नहीं तो वर्षों के साथ रहने पर भी नहीं होता। किसी से प्यार होने की क्या समय–सीमा होती है?'

'किन्तु मुझे तो आपसे प्यार नहीं है।'

'करने लगोगी, शादी के बाद करने लगोगी। अरैंज मैरिज करने वाले क्या आपस में प्यार नहीं करते?' प्यार होना क्या शादी से पहले ही आवश्यक है?

'मिस्टर! आप मेरे अतीत के विषय में नहीं जानते।'

'जानना भी नहीं है। मुर्दा चीजों से मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है।'

'जिस दिन जान जाओगे, घृणा करने लगोगे और प्यार हवा हो जायेगा।

'अतीत इतिहास की वस्तु है, उससे सीखकर भविष्य बेहतर बनाया जाता है। अतीत में रह कर मुर्दा नहीं बना जाता।'

'मिस्टर, तुम मुझसे पाँच वर्ष छोटे हो।' उसने आखिरी और निर्याणक तीर छोड़ा था जिसके विषय में वह अनभिग्न था।

'तो क्या हुआ? इट्स डज नॉट मेक एनी डिफरेन्स। कोई फर्क नहीं पड़ता है। मैं तो राजी हूँ।'

एक मौन पसर गया था। जिरह थम गयी थी, परन्तु स्थिति अब भी अनुकूल नहीं लग रही थी। रमन के उत्तरों से वह निरुत्तर तो हो गयी थी परन्तु संतुष्ट अब भी नहीं लग रही थी। वह अपने आप को तैयार नहीं कर पा रही थी। वह असहज थी।

विमला ने चाय–स्नैक्स लाकर रख दिया था। उसने उसे भी साथ बैठने का ईशारा किया था। विमला एक स्टूल लाकर उसमें बैठ गयी थी, परन्तु उसने बात–चीत में कोई हस्तक्षेप नहीं किया था। सन्नाटा तीनों के बीच खिंचा था। सिर्फ चाय–स्नैक्स चल रहा था और वह वापस लौट आया था, परन्तु कुछ हद तक संतुष्ट था। एक तो उससे पहली लम्बी मुलाकात, साथ रहे, करीब रहे और उसने अपने प्रस्ताव को अच्छी तरह से डिफेन्ड किया था। वह आशावान था।

रमन चला आया था, उसे भावनाओं, इरादों, आकांक्षाओं के भंवर में झोंक कर। सात साल से उसके ऊपर शादी कर लेने का जोर चल रहा था और वह लगातार शादी के नाम से तौबा कर रही थी। अब्बू, अम्मी और भाई सभी थक चुके थे उसे मनाने में मनुहार करने में, पर अडिग थी। झकमार के उससे छोटे दो भाइयों एवं एक बहन की शादी कर दी गई थी। घरवालों को यकीन हो चला था कि मेहविश शादी नहीं करेगी। उसका भी अपने घर मुरादाबाद आना जाना करीब न के बराबर हो गया था। उसने अपने आप को सबसे अलग कर लिया था और एकाकी जीवन को अंगीकार कर लिया था। अब्बू ने भी दिल्ली का यह फ्लेट जो उसके दहेज हेतु खरीदा था उसके नाम कर दिया था और अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ ली थी।

रमन के घरवाले भी जब से उसकी नौकरी लगी थी उसकी शादी कराने को प्रयासरत थे। वह ही घर में अनब्याहा बचा था। पहले वह भी तैयार था जिसे घरवाले पसन्द करेंगें वह उसी से शादी कर लेगा। परन्तु इस कम्पनी में ज्वाइन करते ही उसे मेहविश इस कदर भा गयी थी कि वह घर से आये सारे प्रस्तावों को किसी न किसी बहाने नकार दिया करता कि अभी शादी नहीं करनी है। अभी आगे और बढ़ना है। इतनी जल्दी नहीं। अभी रुक जाइये। ..... मेहविश को लेकर वह उससे रोमान्स के ताने–बाने बनाने लगा था। उसको लेकर मीठी कल्पनाओं और प्रत्याशाओं से भरपूर जीवन में जकड़ गया था और उस जकड़न से वह आजाद भी नहीं होना चाहता था। ये नहीं तो कोई नहीं को उसने अपना सिद्धान्त बना लिया था। मेहविश की उदासी, खामोशी, अकेलापन और उस पर उसकी खूबसूरती जबरदस्त प्रभाव उस पर डाल रहे थे और एक ऐसे प्रभामंडल का निर्माण कर रहे थे जो अद्‌भूत अकल्पनीय और आकर्षण था और वह उसी में मग्न था।

धीरे–धीरे एक–आध महीने और पास हो चुके थे और उनके बीच जड़ता की स्थिति कमोवेश जारी थी। रमन असंतुष्ट दिखने लगा था और मिस खान बेचैन। अब वह उस पर नजर नहीं रखता था सिर्फ उसकी उपस्थिति महसूसता था। वह उससे नजरें चुराता रहता था, जैसे उसने प्रस्ताव रख कर नालायकी की हो। किन्तु मेहविश अक्सर उसको ताकती रहती थी चोर निगाहों से। वह क्या कर रहा है? उसे देश रहा है कि नहीं। उसकी आँखें प्रतीक्षारत रहती थी, किसी संदेश के। कुछ खोजती रहती थी। एक हलचल सी रहती थी जो उसके दिलों दिमाग से चलकर उसके आँखों में उतरती रहती थी। रमन नाखुश जरुर था परन्तु एक जिद उस पर तारी थी, उसे पाने की। फिर भी उदासीनता एवं निर्पेक्षता उसके भाव में उतर आयी थी कि ऐसे ही सही।

ऑफिस के बन्द होने का समय हो चुका था। अधिकांश स्टॉफ जा चुका था। रमन जरुर कुछ बिजी था अपने सहायक मि0 जोशी के साथ। कुछ डिस्कशन चल रहा था दोनों के बीच। ताज्जुब

ये था मिस खान अभी तक नहीं गयी थी। उसे तो एक घन्टा पहले चला जाना चाहिये था। फिर आज क्यों रुकी है? वह कुछ काम भी करती प्रतीत नहीं हो रही थी, परन्तु व्यस्त होने का बहाना जरुर परिलक्षित हो रहा था। वह बेचैनी बेताबी से प्रतीक्षारत थी। किस बात पर? उनके चेहरे पर असमंजस्य की स्थिति विद्यमान थी। उनकी नजर बार–बार रमन के चेम्बर की तरफ जाती थी और मि0 जोशी को बैठा देखकर वापस लौट आती थी।

मि0 जोशी जा चुके थे और रमन भी अपना काम समेटने पर लग गया था। आदत के मुताबिक उसने सामने देखा तो दंग रह गया, मिस खान अपनी टेबुल की दराज बन्द कर के उसकी तरफ ही आ गयी थी। वह सब कुछ भूल गया था, वह वैसा ही रह गया। चित्रलिखित सा हो गया। अभी तक मिस खान नहीं गई?

वह आयी और उसके सामने खड़ी हो गयी। वह असमंजस में थी।

'आप से बात करनी है।' रमन ने विस्मय से देखा और कुर्सी पर बैठने का ईशारा किया। वह थोड़ी देर तक वैसे ही बैठी रहीं। टेबुल की तरफ ताकती हुई शायद कुछ कहने के लिए साहस बटोरती हुयी या कहाँ से शुरु किया जाय, यह सोचती हुयी।

'आपने अपनी क्या हालत बना रखी है?' आपकी यह हालत मुझसे नहीं देखी जाती।' .....वैसे ही मैं बहुत दु:खी हूँ। आपकी उदासी, मुझे परेशान किये हुये है। प्लीज अब और मुझे परेशान मत करो।'

'आप मेरी उदासी नहीं देख सकती और मैं आप की। हम दोनों मिल जाते है। हम दोनों की उदासी मिलकर प्रसन्नता में बदल जायेगी।'

'आप अपनी ये जिद छोड़ क्यों नहीं देते।'

'आपके दुख का कारण मैं हूँ यह सोचकर मैं अपराध बोध से ग्रसित हूँ।'

'अब आपका साथ ही मुझे स्थायी खुशी दे सकता है।'

'ये आपका भ्रम है। मेरा साथ आपको दुख–निराशा, उदासी और पश्चाताप ही देगा।'

'मैं उसमें अपने लिए खुशी निकाल लूँगा, और यकीनन आप को भी खुशी मिलेगी। ऐसा मेरा विश्वास है।'

'मैं तुम्हें न वर्तमान में सुख दे पाऊँगी ना ही भविष्य में।'

'भविष्य की मैं परवाह नहीं करता, मैं वर्तमान् में जीता हूँ और वर्तमान में तुम्हीं मेरी खुशी हो।'

'मैं तो प्रसन्न होने से रही, ये मेरी किस्मत में नहीं है। परन्तु मेरी वजह से आप प्रसन्न होगें, तो ठीक है, ऐसा ही सही और उसने हताशा में समर्पण कर दिया था।

..... और उन दोनों ने कोर्ट में जाकर शादी कर ली थी। दोनों के घर वालों ने उनका बायकॉट कर दिया था। दोनों के घर से रिसेप्शन में कोई नहीं आया था न ही कोई संदेश। रमन की विदा हुई थी मेहविश के घर। मेहविश के फ्लेट में सब कुछ था, सुख सुविधा के सारे साधन, गृह गृहस्थी के सारे इन्तजाम। विमला सुबह–सायं दो टाइम आती थी और घर सफाई कपड़े धोने से लेकर खाना भी वही बनाती थी पहले की तरह। फ्लेट की सारी व्यवस्था मेहविश, विमला के सहयोग से कर लेती थी। रमन सारी जिम्मेदारियों से मुक्त था। यहाँ पर रमन पत्नी था और मेहविश पति। मेहविश का ट्रान्सफर भी मॉल के पास स्थित ऑफिस में कर दिया गया था, पति–पत्नी को एक ही जगह ना रखने की पॉलिसी के तहत। मेहविश, रमन से बाद ऑफिस जाती थी उससे पहले ही आ जाती थी।

काम और रहने का माहौल बदल गया था। दो अलग–अलग रहने वाले साथ रहने लगे थे, नहीं बदला था तो मानसिक परिवेश। रमन हर समय उसे रिझाने, प्रसन्न रखने में मशगूल हो गया था, किन्तु उसकी मनोदशा में कोई भी परिवर्तन परिलक्षित नहीं हो रहा था। वह अब भी उदास बुझी, सफेद गुलाब थी जो महकहीन थी। ऐसा लगता था वे दो अजनबी थे जिन्होने सहजीवन अपना रखा था या वह पेइंग गेस्ट था। या दोनों अलग–अलग ख्यालों के विभिन्न टापू थे जिन्हें बाहर की लहर ही कभी–कभी छूती थी। रमन खुश था उसने अभिष्ठ पाया था परन्तु उसे खुश करने के प्रयासों में अपनी असफलता से चिंतित जरुर था।

वह ज्यादातर अपने कमरे में रहती थी। रमन अपने कमरे में कम, कभी उसके कमरे में कभी लाबी में और कभी बेडरुम में। वह हर समय उसे सम्मिलित करता रहता था हर अपनी गतिविधि में या उसकी गतिविधियों में शामिल होता हुआ। हर समय उसका अकेलापन दूर करने की कोशिश करता हुआ। वह कभी किसी बात के लिये मना नहीं किया करती थी, परन्तु उसकी प्रतिक्रिया इतनी ठंडी, उत्साहहीन और निशब्द होती थी, रमन का उत्साह बुझ जाता था। उसकी कोई इच्छा–अनिच्छा नहीं थी, कोई सुख–दुख नहीं था और कोई आशा–निराशा नहीं थी। एकदम निरपेक्ष, उदासीन अभिव्यक्ति थी वह। ऐसा लग ही नहीं रहा था कि वह अपने पति के साथ रह रही है। रात के अंधेरे में भी उसकी प्रतिक्रिया शब्द और स्पंदनहीन थी। उसे लगता था वह मृत शरीर से अनिसार कर रहा है, या रबड़ की गुड़िया से व्यभिचार और अन्त में उसे और उदास पाता था और अपने को और भी ज्यादा असंतुष्ट।

हाँ, वाह्य रुप में परिवर्तन परिलक्षित हुआ था। माथे पर एक छोटी बिन्दी गले में चेन और अंगुली में एक अंगुठी जरुर शोभायमान हो गयी थी जो उसकी खूबसूरती को और चमका रही थी। मेहविश उसको सुख देने को कृतसंकल्प दिख रही थी। वह उसके लिये निषेध से अनभिग्य थी। कोई सहमति असहमति नहीं

थी। उसकी कोई मांग डिमान्ड, फरमाईश नहीं थी। सिर्फ उसे देना देना और देना ही था। उसने रमन के नाम पर सारी जमा पूँजी और फ्लेट लिखवा दिया था। नहीं दिया था तो अपनी उदासी, एकाकीपन और अपना दुख।

क्या रमन की सोच पराजित हो रही थी? उसने सोचा था कि वह मेहविश से शादी करके उसे उदासी दुख और खामोशी से पूरी तरह निजात दिला देगा और बुझी काया को कांतिरुप देगा। क्या वह असफल हो रहा था? अक्सर वह सोच में पड़ जाता था, कि उसने क्या गलत किया? उसकी उदासी, खामोशी का ईलाज शादी नहीं था? ऐसा कौन सा दुख गम चिंता या परेशानी है जो उसका पीछा नहीं छोड़ रही है? उसके ऊपर अतीत की वह कौन सी काली छाया है जो उसके जिस्म से चिपकी है। वह कई प्रकार की दबावें और तनावों से भरता जा रहा था।

आज शादी की सालगिरह थी। यांत्रिक तरीके से एक–दूसरे को बधाई प्रेषित की गई थी। सब कुछ सामान्य था अन्य दिनों की तरह। परन्तु मेहविश कुछ व्यग्र थी, उसने ऐसा नोट किया।

एकदम डोर बेल बजी। उसने डोर खोला, 'हैपी मैरिज एनीर्वसरी, सर।' दो अनजान व्यक्तियों ने उसे विश किया। वह चकित हुआ, जब मेहविश ने उनके हाथ से गिफ्ट लेकर उसे दिया। लिखा था 'हैपी मैरिज एनीर्वसरी टू रमन फ्राम मेहविश।' वह कार की चाबी थी, और वे व्यक्ति कार कम्पनी के थे। वह अदा से खड़ी थी और मुस्कराहट दबाने की कोशिश कर रही थी। उन लोगों ने बताया आज के दिन और इसी समय डिलीवरी का वादा मैडम ने कराया था। उसने ऑफिस से लोन लेकर कार गिफ्ट का इन्तजाम किया था। ये अभियान इतना गुप्त था कि रमन वास्तव में आश्चर्यचकित रह गया था। एक बार फिर उसने वर्षगांठ को बधाई दी और कहा 'आज ऑफिस कार से जायेंगे।' रमन ने कहा 'वह जायेगा ही नहीं और ना ही तुम जाओगी, आज सेलिब्रेट करेंगे। और उसे बांहों के घेरे में ले लिया था। उसने धीरे से अपने को मुक्त किया, क्योंकि दोनों अजनबी एवं विमला देख रहे थे और मुस्करा रहे थे।

लकदक सफेद कार, उसे लगा कि उसने अपना प्रतिरुप ही भेंट किया हैं उस दिन लॉग ड्राइव पर निकल गये और सिनेमा, देखा और डिनर बाहर होटल में किया। वह बहुत प्रसन्न था, गिफ्ट की वजह से नहीं अपितु आज मेहविश उसे उदास नहीं दिखी थी और संतुष्ट भी। उसे लगा कि वह अपने प्रयास में सफल हुआ है, परन्तु खामोशी अब भी जारी थी। रमन भी अपना गिफ्ट पिछली रात ही ले आया था, परन्तु उसने पहल करके बाजी मार ली थी। उसने सोचा की अब यह गिफ्ट तभी देगा, जब वह उम्मीद छोड़ देगी।

रात के ग्यारह पर वे लौटे थे। वे बेडरुम में आ गये थे, रमन ने बेड से गिफ्ट निकाला ज्वैलरी सेट था और उसे भेंट किया, बधाई सहित। उसने एक फीकी हंसी के साथ थैंक्स कहा था, परन्तु उदासीनता प्रकट हो रही थी। 'क्या जरुरत थी?' मैं तो पहनती नहीं। पहले वाले को कभी तक पहना क्या? मैं तो ज्वेलरी पसंद की नहीं करती।' उसका मन बुझ गया था। फिर भी उसने अपने आप को तुरन्त सम्हाल किया और कोई ऐसा भाव नहीं आने दिया कि उसकी उदासीन प्रतिक्रिया से वह किसी तरह आहत हुआ था।

दिन फिर वैसे ही चलने लगे थे, बिना किसी उमंग और उत्साह के। ढर्रे पर रुटीन ही गयी थी। उसकी सोंच कि शनैः शनैः वह उसे प्यार करने लगेगी संदिग्ध होता जा रहा था। उसे विश्वास होता जा रहा था कि उसने उससे शादी इसलिये की कि वह खुश रहे न कि अपनी खुशी के लिये। परन्तु वह सोचता है कि उसके प्रति प्रत्याशा उसके अपने प्रयास को निरुत्साहित भी कर सकती है, इसलिये उसे ऐसा नहीं करना चाहिये।

शादी हुये दो साल होने को आ रहे थे और रमन में एक अजीब सी व्याकुलता व्याप्त थी। दोनों अजनबियों को परिचित कराने वाले किसी तीसरे के आने की कोई सम्भावना, चिंह संकेत प्रगट नहीं हो रहे थे। अधूरेपन के यथार्थ से वह भयभीत था।

उसने डाक्टर से डेट ली और उसे अपने साथ चेकअप के लिए क्लीनिक चलने को कहा।

'इसकी कोई जरुरत नहीं है।' उसने मना कर दिया। वह बेहद विचलित एवं अस्थिर हो गयी थी।

'चेकअप करवाने में हर्ज ही क्या है?' उसे ताज्जुब हुआ था। शादी के उपरान्त पहली बार उसने उसकी मना सुनी थी। रमन की आवाज तल्ख थी। वह भी विस्मित थी, उसने भी पहली बार रमन की आवाज तल्ख लगी थी।

'क्योंकि मुझे कारण पता है और जिसका निवारण नहीं है।' वह अशान्त दुखी और द्रवित थी, उसकी आवाज भर्रा रही थी।

'क्या कारण जानने का हक मुझे है?' उसने यथार्थ जानने की कोशिश की।

'यह कारण ही मेरे अतीत से सम्बन्धित है जिसे जानने के लिये पहले आप अनिच्छुक थे।' मैंने कहा था ना, मुझसे न वर्तमान में सुख मिलेगा न भविष्य में।' उसकी आंखें भर आई थीं, किन्तु वह रुकी नहीं और अपने अभिशप्त जीवन के विषय में कहना जारी रखा था ....

.....वह एम0 ए0 फाइनल ईयर में थी, तभी अब्बू के पास उसके लिए उनकी फुफेरी बहन का प्रस्ताव आया था, अपने लड़के शाहिद के लिये। वह दुबई में इंजीनियर है। आजकल इसी सिलसिले में आया हुआ है। उसे अब्बू को मना किया था कि अभी वह पढ़ना चाहती है। परन्तु उन्हौंने कहा था 'देख लो, समझ लो, पसन्द कर लो।' निकाह पढ़ाई पूरी करने के बा ही करेंगे। ज्यादा से ज्यादा अभी सगाई कर देंगे।' उन्होंने अपना निर्णय सुना दिया था।

..... वह मिलने को राजी हो गयी। शाहिद काफी हैडसम और खूबसूरत लगा था और वह पहली ही नजर में मर मिटी थी। दोंनो ने एक–दूसरे को पसंद कर लिया था..... और फिर साथ–साथ रहना घूमना–फिरना चालू हो गया था। ..... पढ़ाई से ध्यान हट गया था ..... रोमांस प्रारम्भ हो गया था ..... दुनियां रंगीन हो गई थी ..... और वे दोंनो काफी करीब आ गये थे..... इतने करीब की सारी हदें पार कर गये थे..... दोंनों की सगाई कर दी गई थी ..... एक माह तक दोंनों का साथ रहा था। शाहिद लौट गया था। अब की बार दुबई से आयेगा तब निगाह कर दिया जायेगा। ऐसा तय किया गया। तब तक उसका एम0 ए0 भी कम्पलीट हो जायेगा। ..... सब कुछ खुशी–खुशी था ..... वह प्रसन्नता के उच्चतम् शिखर पर थी। उसको अप्रत्याशित मानसिक चैन और शारीरिक सुख मिला था।..

..... तय अन्तराल पर शाहिद नहीं आ रहा था। तीन–चार माह व्यतीत हो चुके थे..... उससे कोई सम्बन्ध नहीं स्थापित हो पा रहा था..... उसकी अम्मी भी कुछ बता नहीं पा रही थीं। मोबाईल स्वीच ऑफ जा रहा था। पत्रों के उत्तर प्राप्त नहीं हो रहे थे। अब्बू बेचैन और खीज रहे थे। कई बार वह जाहिदा फूफी के पास जो आते थे, शाहिद के विषय में जानकारी प्राप्त करने। परन्तु सब–कुछ अंधेरे में था। ..... शाहिद के आने का इन्तजार लम्बा होता जा रहा था। .....

अव्यक्त और अनचाही संजीदगी मेहविश पर पसर गयी थी और उस पर मातमी माहौल छाने लगा था..... इधर उसका आकार भी बढ़ने लगा था ..... उसके भीतर अहंम परिवर्तन होने लगे थे। वह व्यथित और गमसुम हो गयी थी उसने अम्मी से आशंका व्यक्त कर दी .... अब्बू दुबई निकल पड़े थे, शाहिद की पड़ताल करने। वहाँ जाकर पता चला कि शाहिद इंजीनियर नहीं एक दुकान के टेलर हैं ..... और उसकी शादी भी उसी दुकान मालिक की लड़की से हो चुकी है। अब्बू मातम मनाते लौट आये थे और आकर फूफी पर बरसे थे परन्तु फूफी ने अनभिज्ञता व्यक्त कर कर दी थी.....वह नफरत, द्वेष, भय और गम में घिर कर अंधेरे में खो गई थी ..... दर्द की ..... बेइन्तहा ..... बेहोशी का दौरा ..... और उससे अन्तरनिष्ठ जीवन छीन लिया गया ..... उसे कोख की भी आहूति देनी पड़ी थी .... और भविष्य की सारी सम्भावनाएं भी समाप्त हो गयी थी।

..... उसकी दुनिया उजड़ गई थी। आत्मा और जिस्म दोनों छिल गये थे। उसे मानसिक और शारीरिक क्षति पहुँची थी। किन्तु आश्चर्यजनक रुप से सारा दोष उसी पर डाल दिया गया कि वह अपने सम्मान की रक्षा करने में असमर्थ रही थी। उसके अस्तित्व एवं अस्मिता पर गहरे–गहरे घाव हो गये थे। उसे प्रेम–प्यार, इश्क आदि लफ्जों से नफरत हो गई थी। शादी उसके लिए एक दु:स्वप्न थी। दुख उदासी खामोशी और एकाकीपन उसके हमसफर हो गये थे। कोई भी सुख उसे आकर्षित नहीं कर पाता था। ..... वह बिसुरने लगी थी और फिर फूट–फूट कर रोने लगी थी। आंसुओं की अनवरत श्रृंखला जारी थी। उसने इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं किया और उसे पूरी तरह खाली हो जाने दिया। गम और गुबार निकल गये थे और अस्तित्व में छाया बोझ ढह गया था। उसके सारे आंसू समाप्त हो गये थे और चेहरा धुला–धुला सा लग रहा था। एक मासुमियत उसके चेहरे पर छा गई थी। अब उसने उसके चेहरे का अपनी हथेली पर लेकर चूमा और गले लगाकर, पीठ पर थपथपाकर आश्वस्त किया और उस सदाशयता का परिचय दिया जिसकी अभिव्यक्ति विरल थी। उसका स्पर्श और प्यार से उत्पन्न पुलक अब उसकी आंखों में छा गई थी।

रमन के रुप में पुरुष का स्थाई संरक्षण पाकर वह संतुष्ट थी। उस पर उदासी छट गई थी। खामोसी खरामा–खरामा कम हो रही थी। और एकाकीपन से वह पूरी तरह निजात पा चुकी थी। उसे लगा कि वह उसे प्यार करने लगी है, ऐसा उसकी हरकतों से परिलक्षित होने लगा था।

शादी की दूसरी वर्षगॉठ आने में चन्द शेष रह गये थे। अब की बार वह प्रथम आने की फिराक में जुट गया था। वह कुछ ऐसी भेंट देना चाहता था जो कि अनमोल, अनुपम और अतुलनीय हो और उसकी कल्पना से परे हो, जो उसे पूर्ण रुप से खिला सकें।

उस दिन, उस विशेष दिन वह घर से जल्दी निकल गया। जब विमला निकली थी, उसी समय। उसने उसे कुछ नहीं बताया। वह सोचती रह गई थी। वह कहाँ गया होगा। अवश्य ही कोई गिफ्ट लेने। उसने अबकी बार कोई गिफ्ट न देने को निर्णय किया था। उसने सोचा था आज वह सर्वस्व देगी, अपनी अस्मिता और अस्तित्व। वह पूर्ण रुप से समर्पित होगी मन, वचन और कर्म से। आज के दिन पूर्णरुप से उसके साथ होगी।

काल–बेल बजी, वह दौड़ कर दरवाजा खोलने पहुँची। देखा रमन अकेला था बिना किसी सामान के। उसे तनिक निराशा हुयी। वह पटलकर चल दी और रमन पीछे था। उसने कुछ कहा भी नहीं। वह फिर पलटी बिना किसी प्रत्याशा से, तो देखा रमन के हाथ में कुछ था, पीछे विमला थी। उसे विमला का इस समय आना कुछ अचरज भरा लगा। उसने मेहविश की गोद में वह गिफ्ट डाल दी। वह आश्यर्चचकित, विस्मिता और हतप्रभ रह गई। उसकी गोद में आठ–नौ माह का एक बच्चा था, जिसने गोद में आते ही आंखे खोलकर टुकुर–टुकुर उसे देखने लगा था। प्यारा सा बच्चा, वह खुशी से पागल हो गई। उसने बच्चा को अगिनत बार चूमा और फिर वह रमन से लिपटकर उस पर चुम्बनों की बरसात कर दी। उसे विमला की उपस्थिति का भी ख्याल ना रहा। उसकी आखों में खुशी के आंसु थे। उसके अंग–प्रत्यंग से खुशी टपक रही थी। सफेद गुलाब पूरी तरह से गुलाबी हो चुका था और उसकी खुशबू फैलने लगी थी अब फूल पूरी तरह से खिल चुका था।

कहानी

किन्तु मैं हारूँगी नहीं

नीरजा हेमेन्द्र
न्यू हैदरावाद, लखनऊ
मो0-9450362276

सायमा का घर जैसे-जैसे समीप आता जा रहा था, उसके मन-मस्तिक में विचारों का प्रवाह गतिमान होता जा रहा था। रेलवे स्टेशन के बाहर आकर उसने चारों ओर दृष्टि घुमाई। बसें, टैम्पों, ऑटो रिक्शे, गाड़ियाँ कोलाहल व भीड़। जिधर दृष्टि जाती उधर भागते लोग, भागता शहर। बाहर मची आपा-धापी का दृश्य देख कर पहले तो वह घबरा गई। पुनः मनोभावों पर नियंत्रण करते हुए वो साहस के साथ आगे बढ़ी। मनोभाव अनियंत्रित हों भी क्यों न? इस शहर में उसके हृदय का अंश अर्थात उसकी पुत्री सायमा जो रहती है। वैसे तो इससे पूर्व भी वह कई बार इस शहर में आ चुकी है किन्तु सायमा के विवाह के पश्चात् वह प्रथम बार इस शहर में आ रही है। स्टेशन से बाहर आकर पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अंतर्गत वह अपने एक परिचित को फोन करके बुला लेती है। प्रथम बार अकेली वह सायमा के घर जाना नहीं चाहती। कोई तो हो साथ में सगे-संबन्धियों जैसा। उसका कोई नहीं है जो उसके साथ चल सके, उसके साथ खड़ा हो सके। इसी अभाव को पूर्ण करने के लिए उसने अपने एक परिचित को अपने साथ चलने के लिए बुलाया है।

वह एक ऑटो तय करके उसमें बैठ जाती है। अपने साथ लाए दोनों बैग को सम्हाल कर सीट पर समीप रख लेती है। वह बार-बार उन बैग पर स्नेह से हाथों को घुमाती है। ऐसा करते समय उसके चहरे पर आत्मसंतुष्टि के भाव आ जाते हैं। इन दोनों बैग में उसकी पुत्री व उसके ससुराल के सदस्यों के लिए उपहार की वस्तुएँ हैं। ऑटो पर चल पड़ती है। स्टेशन के बाहर साफ-सुथरी सड़क, दोनो तरफ ऊँची-ऊँची बिल्डिंगें, बड़ी-बड़ी दुकाने व कार्यालय, रेस्टोरेन्ट, मॉल्स, सब पीछे छूटते जा रहे है। कितना आकर्षक लग रहा है यह शहर। नागरिक सुविधाओं से युक्त व व्यवस्थित। हो भी क्यों न? यह शहर इस प्रदेश की राजधानी है..... ...लखनऊ है। यह शहर इसलिये भी उसे अच्छा लग रहा है क्योंकि उसकी बड़ी पुत्री सायमा का व्याह यहाँ हुआ है। वह यहीं रहती है।

अभी मात्र छः माह पूर्व की ही बात है जब सायमा का व्याह यहाँ की निवासी शशिभूषण जी के इकलौते पुत्र प्रवीण के साथ सम्पन्न हुआ है। सामया उसके तीनों बच्चों मेंसबसे बड़ी है। उससे छोटी समायरा स्नातक की शिक्षा ग्रहण कर रही है। एक पुत्र समर्थ है जो दोनों पुत्रियों से छोटा है। वह स्नातक प्रथम वर्ष में है।

ऑटो ज्यों-ज्यों आगे की तरफ दौड़ती जा रही थी, उसका हृदय पुराने दिनों की स्मृतियों में पीछे की तरफ जा रहा था। आज न जाने क्यों उसे भी पुराने दिनों की स्मृतियों में डूब जाने की इच्छा हो रही थी। .....पन्द्रह वर्ष व्यतीत हो चुके हैं उस घटना को घटित हुए जब उसके पति ने उसे व उसके इन तीनों बच्चों को छोड़कर दूसरा विवाह कर लिया था। उसका पति यहाँ से दूर दूसरे शहर में एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी में कार्य करता था, तथा वो कानपुर के उनके पैत्रिक आवास में तीनों बच्चों के साथ रहती थी। बच्चों के साथ उसे अलग व कानपुर में रहने का कारण था उसके पति की बार-बार स्थानान्तरित होने वाली नौकरी। उनके बार-बार होने वाले स्थानान्तरण का प्रभाव बच्चों की शिक्षा पर न पड़े इस कारण वह एक ही स्थान पर रहने को वाध्य थी। यही कारण था कि वह अपने पति से अलग कानपुर में रहती थी। अपना पूरा समय बच्चों की देखभाल वह शिक्षा पर व्यतीत करती। उसके पति भी घर की प्रत्येक आवश्यक्ता का समुचित ध्यान रखते थे। कभी भी अपने उत्तरदायित्व के प्रति उदासीन नही होते थे।

परिवार के प्रति उनके इस समर्पण को देख कर वह भी अपनी घर-गृहस्थी व बच्चों की शिक्षा के प्रति समर्पित हो गई इन सबके मध्य वह अपने दाम्पत्य जीवन के प्रति उदासीन हुई हो या अन्य जो भी कारण रहा हो....बहुत देर हो चुकी थी। शहरों की दूरियाँ हृदय की दूरियों में परिवर्तित हो चुकी थीं।

इन दूरियों व उसके पति के किसी अनैतिक सम्बन्ध का प्रभाव बच्चों के प्रति उनके स्नेह पर भी पड़ा। उसमें भी कमी आयी। वह अब अवकाश के दिनों में कम आने लगे। उसके पूछने तथा बच्चों के बुलाने पर आना बन्द कर दिया। उसे ऐसा महसूस होने लगा जैसे वह अपने तीनों बच्चों को ले कर खुले आसमान के नीचे खड़ी हो। जहाँ चारों तरफ कोई आवरण नहीं, कोई आश्रय नहीं। उसके पैरों के नीचे की जमीन भी उस समय भरभरा कर टूटती हुई सरक-सी गयी जब उन्होंने तलाक के कागजात हस्ताक्षर हेतु भिजवायें। उसने

अथक परिश्रम किये अपने टूटते घर को बचाने के लिए किन्तु सारे प्रयत्न व्यर्थ गये। उसके पति ने प्रति माह कुछ पैसे व अपने पैत्रिक घर का कुछ हिस्सा उसके नाम कर दिया।

उसका साहस टूट चुका था.....जीने की इच्छा दम तोड़ चुकी थी। उसे जीतिव रहाना था तो मात्र बच्चों के लिए। घर की आवश्यक्ताओं को पूरा करने के लिए उसने निजी स्कूल में अध्यापन कार्य किया। छोटे बच्चों को ट्यूशन पढ़ाये। यहाँ तक कि बुटीक व रेडीमेड कपड़ों की दुकानों पर कार्य किया।

शनैः–शनैः सब कुछ सुचारू रूप से चलने लगा। तीनों बच्चें पढ़ने के साथ ही साथ अन्य कार्यों में उसका सहयोग करते। बच्चे इस बात को समझते कि उनकी माँ के साथ अन्याय किया गया है। वह भी अपने उत्तरदायित्व से कभी विमुख नही हुई। वह जानती थी कि बच्चों का अब इस संसार में यदि कोई अपना है तो वह माँ ही है। वह बच्चों से अत्यन्त प्यार करती, पिता के हिस्से का भी। ताकि उन्हें कभी भी किसी प्रकार का भावनात्मक आघात न पहुँचे। उसके स्नेह की छाँव व देख भाल में बच्चे आगे बढ़ने लगे।

समय धीरे–धीरे ही सही आगे बढ़ता गया और उसकी बड़ी पुत्री सायमा विवाह योग्य हो गयी। उसकी शिक्षा भी पूरी हो चुकी थी। उसे ऐसा प्रतीत होता था जैसे अभी कल की ही बात हो जब सायमा नन्ही–सी बच्ची थी। आने वाले प्रत्येक रविवार, अवकाश या किसी पर्व के दिनों में उत्साहित होकर पूछा करती थी, "पापा कब आयेंगे?...वे हमारे लिए कौन–कौन–सी चीजें लायेंगे?.. .इत्यादि अनेक बाल सुलभ प्रश्न, बाल सुलभ बातें। शनैः–शनैः सायमा बड़ी होती गयी और माँ के साथ हुए अन्याय को समझने लगी। धीरे–धीरे उसके प्रश्न कम होते–होते समाप्त हो गये। उसके साथ समायरा व समर्थ भी समय से पूर्व बड़े हो गये तथा अपने पापा से सम्बन्धित प्रश्न पूछने बन्द कर दिये।

सायमा के विवाह हेतु जब किसी परिचित् रिश्तेदार या अपनों ने कोई रिश्ता नहीं बताया तो उसने स्वंय ही समाचार पत्रों में प्रकाशित वैवाहिक विज्ञापनों के माध्यम से यह रिश्ता तलाश लिया था।

रिश्ता सुनिश्चित् करते समय उसके हृदय में कितनी आशंकायें उठ रही थीं। कितनी दुविधाओं, कितने अन्तर्द्वन्द्व से जूझना पड़ा था उसे, तब जा कर वह इस रिश्ते को हाँ कह पाई। उसका हृदय यह सोच कर काँप जाता कि उसके किसी गलत निर्णय से भावी जीवन में बच्चियों को कोई दुःख पहुँचता है तो वह तो अपराध भाव से ग्रस्त हो जायेगी। आखिर वह ही तो है इन बच्चियों की सर्वस्व।

विवाह के पश्चात् आज वह सायमा की ससुराल प्रथम बार आ रही हे। अपने आने की सूचना उसने सायमा के ससुराल में दे दी है। अपने एक परिचित को भी बुला लिया है। वह आज असहज अनुभव कर रही है। यूँ तो वह प्रतिदिन फोन द्वारा सायमा से बातें कर लेती हैं उसका कुशल क्षेम पूछ लेती है किन्तु उसने आज सायमा से कोई बात नहीं की है। वह आज सीधे सायमा के समक्ष जा कर खड़ी हो जायेगी तथा उसे अचम्भित कर देगी। यही आज उसकी इच्छा हो रही है।

घर्र.....घर्र.....घर्र....ऑटो आ कर सायमा के घर के सामने आकर रूक जाती है। वह ऑटो से बाहर चारो तरफ दृष्टि घुमाती है। यही है सायमा का घर। सामने एक बहुमंजिला अपार्टमेन्ट, जिसकी पाँचवी मंजिल पर सायमा की ससुराल है। परिवार में सास–श्वसुर, उनका दामाद प्रवीण, प्रवीण की एक छोटी बहन व सायमा है। उसे संतोष है कि उसने पिता विहीन अपनी बच्ची का विवाह एक शिक्षित, सम्पन्न घर में किया है।

उसने ऑटो से उतर कर देखा तो अपार्टमेंट के मुख्य गेट पर उसके वो परिचित पहले से ही खड़े थे। उन्हें देख कर उसे प्रसन्नता की अनुभूति हुई कि साथ में कोई तो है वह अकेली नही है। अपार्टमेंट की लिफ्ट से ऊपर चढ़ते समय लिफ्ट में खामोशी–सी पसर गयी किन्तु उसके मन–मस्तिष्क में चिन्तायुक्त उथल–पुथल मची हुई है। चिन्ता एक माँ की कि उसकी बेटी सुखी रहे। चिन्ता इस कारण भी की जिन्दगी ने उसे पग–पग पर छला है। वह अपनी बेटी के किंचित दुख भरे जीवन की कल्पना मात्र से सिहर जाती है। लिफ्ट रूक जाती है। वो साड़ी का आँचल सिर के ऊपर से ढ़कते हुए एक सिरा जोर से मुट्ठी में दबा लेती है।

बेटी के घर के दरवाजे की घंटी बजाते ही कुछ क्षणों उपरान्त शशिभूषण जी दरवाजा खोलते हैं। अभिवादन के आदान–प्रदान के पश्चात् वो मुस्कुरा कर उन दोनों को अन्दर आने के लिए कहते हैं। उन्हें ड्राइंग रूम में सोफे पर बैठने का संकेत करते हुए स्वंय भी बैठ जाते हैं। वह उनके कुशल क्षेम पूछने के औपचारिक प्रश्नों के जवाब देते ड्राइंग रूम के दरावाजे से दिखाई देने वाले घर के हिस्से की तरफ बार–बार देख लेती है। कदाचित् वहाँ सायमा दिखाई दे जाये क्योंकि शशिभूषण ने उन्हे ड्राइंग रूम में बैठाते समय

ही थोड़े ऊँचे स्वर में घर के अन्दर आवाज लगा कर उसके आने की सूचना दे दी थी। कुछ क्षणों उपरान्त शशिभूषण की पत्नी यशोदा भी आ कर ड्राइंग रूम में बैठ गयीं तथा बातें करने लगीं। बातें सब्जियों की, मौसम की, सड़कों पर बढ़ते ट्रैफिक की, महंगाई इत्यादि की। सायमा अब तक सामने नहीं आई थी। उसकी अधीरता बढ़ती ही जा रही थी। अन्ततः वह यशोदा की तरफ मुखातिब हो कर पूछ बैठी–'' सायमा क्या कर रही हैं?''

''कुछ नही! अभी आ रही है।! उसके प्रश्नों का उत्तर देते हुए यशोदा के होठों पर हल्की–सी औपचारिक मुस्कान उभर आयी।

लगभग आधे घंटे के पश्चात् सायमा आ गयी। उसके हाथ की ट्रे में पानी की बोतल व कुछ गिलास थे। सायमा ने मुस्कुराते हुए उसे देखा तथा उसके पास आ कर बैठ गयी। उसने यह अनुभव कि सायमा की यह मुस्कुराहट सायमा के चेहरे की ऊपरी सतह तक ही सीमित है। उसकी आँखें खमोश हैं। वरना सायमा की उदासी उससे छिपी न रह सकी। फिर भी वह हृदय को यह समझाती रही कि यह मात्र भ्रम है। सायमा यहाँ खुश है।

वह उहापोह की स्थिति में बैठी रही। उसने समीप बैठी सायमा को ध्यान से देखा। थकी –थकी सी लग रही थी। वो नई–नवेली दुल्हन–सा कोई बनाव श्रृंगार नहीं। वह सायमा से अकेले में बातें करने के लिए अधीर हो उठी, किन्तु यह सम्भव न था। क्योंकि सायमा से अकेले में बातें करने का कोई अवसर नही मिला उसे। अपने साथ लाई उपहार की वस्तुओं को उसने सायमा की सास को दे दिया। कुछ देर रूकने के पश्चात् शाम होते ही वह घर के लिए निकल पड़ी। जाते–जाते अगले माह के प्रथम सप्ताह में सायमा की बिदाई तय कर गयी। वह शीघ्र सायमा को अपने पास बुला कर कुछ समय के लिए अपने पास रखना चाह रही थी। उससे उसका हाल पूछना चाह रही थी।

दिन निकलता, रात ढलती पुनः दूसरा दिन आता। वह अज्ञात आशंकाओं में घिर कर दिन व्यतीत कर रही थी। वह सायमा के आने की तिथि की प्रतीक्षा अधीरता के साथ कर रही थी। जब सायमा यहाँ आएगी, उसके पास। समय अपनी ही गति से चलता है। यदि हम समय से शीघ्र व्यतीत होने की अपेक्षा भी करें तो भी वह अपनी ही धुन, अपनी ही गति से चलता है। हमारी अपेक्षाओं की, हमारी शीघ्रता या विलम्ब की परवाह नहीं करता।

अन्ततः वह दिन भी आ ही गया जब सायमा प्रवीण के साथ आ गई। सायमा के आ जाने से वह प्रसन्न थी। दोपहर के भोजन के उपरान्त सायमा से बातें करने का अवसर मिला। सायमा भी अपनी माँ से अपने हृदय की बातें, अपने दुख–सुख की बातें बताना चाह रही थी। बातों का क्रम ज्यों–ज्यों आगे बढ़ता जा रहा था खुशियाँ मुट्ठी में बन्द रेत सी धीरे–धीरे फिसलती जा रही थी। कारण था सायमा के ससुराल वालों द्वारा उसके साथ किया गया विश्वासघत, झूठ, छल। "विवाह पूर्व प्रवीण एक निजी कम्पनी में नौकरी करता था, किन्तु कुछ अनियमितताओं की वजह से उसे नौकरी से हटा दिया गया था। इस बात का प्रवीण के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा, तथा वह अवसादग्रस्त हो गया वह असमान्य व्यवहार करने लगा। छोटी–छोटी बातों पर क्रोध, चिड़चिड़ापन उसके स्वभाव में सम्मिलित हो गया। इलाज करवाने के पश्चात् भी उसकी दशा में कोई सुधार न होता देख उसके घर वालों ने उसका विवाह कराने का निश्चय यह सोच कर किया कि विवाहोपरान्त पत्नी के सम्पर्क में आने के बाद उसकी मानसिक स्थिति सामान्य हो सके। इसके लिए उन्हें मिली पिता विहीन बच्ची सायमा। विवाहोपरान्त भी प्रवीण की मानसिक स्थिति में सुधार नहीं आया। वह कोई काम भी नहीं करता है। अभी वह आर्थिक रूप से अपने पिता पर निर्भर है भविष्य में क्या होना है? ज्ञात नहीं।" सायमा की यह बातें सुन कर उसके पैरों के नीचे से जमीन खिसकती जा रही थी। यूँ लग रहा था जैसे प्राण ही शरीर से निकल जायेंगे।

उसने तो सायमा का विवाह शिक्षित, सम्पन्न घर व आत्मनिर्भर योग्य वर देख कर किया था। उसे यदि किसी बात की आशंका थी वो मात्र यह कि सायमा के ससुराल वाले सब कुछ देने के पश्चात् भी और दहेज की मांग न करें तथा और पैसों के लालच में सायमा को प्रताड़ित न कर बैठें। किन्तु उन्होंने तथ्यों का छिपा कर पढ़ी–लिखी, संवेदनशील उनकी पुत्री का जीवन विध्वंसित व बरबाद कर दिया है।

सायमा की पीड़ा सुन कर वह बेबस हो रही थी। उसकी पीड़ा की कोई थाह, कोई सीमा नही थी। आज इस दुःख की घड़ी में उसके पास कोई नहीं है। अपने तीनों बच्चों के साथ एक वह ही है। माँ के साथ–साथ पिता के रूप में भी। उसके साथ है मात्र उसका साहस और आत्मतिश्वास। जब से उसके पति ने दूसरा विवाह कर लिया था, तब से फिर कभी भी पलट कर उसने उसका या बच्चों का हाल नहीं पूछा। किन–किन दुरूह परिस्थितियों का सामना करते हुए उसने बच्चों का पालन–पोषण किया। आर्थिक अभावों व सामाजिक जटिलताओं से संर्घष करते हुए उसने उन्हें उच्च शिक्षित किया। आज उसके साथ..... उसकी बच्ची के साथ छल

किया गया है। क्या उसे बेसहारा व अकेली समझ कर ऐसा किया गया.....?

सायमा की बातें सुन कर उसका मन हो रहा था कि वह तीव्र स्वर में फूट–फूट कर रोये...इतने तीव्र स्वरों में कि आसमान थर्रा जाये या धरती काँपने लगे। किन्तु वह ऐसा न कर सकी और न करना चाहती। सायमा या बच्चों के समक्ष वह कमजोर होना नहीं चाहती। यदि वह ही ऐसे टूट जाएगी तो सायमा कैसे अपने आप सम्हाल पाएगी। उसके विचलित होने या रोने से उसके अन्य दोनों बच्चों पर भी नाकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। उसने स्वय को संयत किया व सायमा को भी ढाढस बँधाया। आँसुओं को आँखों में ही कैद कर लिया।

दूसरे दिन प्रवीण चला गया, सायमा को कुछ दिनों के लिए उसके पास रहने के लिए छोड़ कर। प्रवीण ने सायमा के नेत्रों में भरी रिक्तता औरचेहरे पर पसर चुकी उदासी की लकीरों को कदाचित् पढ़ लिया था। वह जान गया था कि सायमा भावी जीवन की आशंकाओं से भयभीत है। प्रवीण का बिना कुछ कहे चुपचाप चले जाना इस बात का साक्ष्य था।

वह पल–पल सायमा के भविष्य को ले कर चिन्तित रही। कुछ दिनों तक वैचारिक संघर्षों से जूझती रही कि सायमा को कैसे विदा कर पाएगी उसकी ससुराल? सायमा कैसे रहेगी एक बेमेल जीवन साथी के साथ? कैसे करेगी वह भविष्य में आने वाली आर्थिक, सामाजिक, मानसिक कठिनाईयों का सामना नितान्त अकेली?

पिछले दो दिन उसने इसी वैचारिक मंथन में निकाल दिये हैं। उहापोह भरे दो दिन कष्टप्रद तरीके से व्यतीत किये हैं..... ..किन्तु अब और नहीं। अब उसका यह दृढ़ निश्चय है कि सायमा अब यहीं रहेगी उसके साथ। यहाँ रह कर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने का प्रयत्न करेगी। उसने प्रबन्धन में परास्नातक की शिक्षा ली है। वह यहीं रह कर अपने लिए नौकरी की तलाश करेगी। सायमा को वह इतना सक्षम बनायेगी कि जीवन के झंझावातों का सामना वह अकेली रह कर भी कर सके। वह सायमा को कमजोर या अबला न समझे। उसने निश्चय कर लिया है कि आँधियाँ चाहें जितनी भी तीव्र वेग से चलें, उसे लक्ष्य से विचलित करने का प्रयत्न करें.....किन्तु वह हारेगी नही।

कविता

बिखरे सपने

डा0 रामकिशोर शर्मा,
भागलपुर
मो0–9801785234

बहुत छोटा ... शायद नगण्य
मैनें देखा ... सपनों को
जीने के हजार पल मिले
एक पल ही ... अपनों सा हो
जहाँ खुला आसमान हो
उड़ने वाली पंछी भी खुश हो
बसंत का गायन भी हो
बरसात का रिमझिम भी हो
जीवन में सीमाओं को
न कोई समर न ताने–बाने हों
पर अजीव सी थी वो रात
थका सा ... सोचता रहा
टूटे सपनों से लड़ता रहा
फिर चैतन्य का भाव आया
मन शरीर में होते हुए भी
ढूढ़ता रहा उस संपूर्णता के क्षण
पर सपनों का क्या
संभल कर उठा .....
चल तो दिया
ज़िन्दगी की ढ़ालानों पर
उसी संपूर्णता को ढूढते
पर शांत मौन ठहरा सा
जीवन मरीचिका को निहारते सा ...

कविताएँ

डॉ0 अश्विनी
भागलपुर
मो0-9470023033

एक देश है

एक देश है
जहाँ देखते हैं
लोग सपनें / गढ़ते हैं रिश्ते
बांटते हैं खुशियां
करते हैं बातें
गाँधी और बुद्ध की मानिन्द
मगर सुना है
उतरता है
गिद्धों का एक काफिला
उभरता है सिर्फ शोर
समेटता है अपने आगोश में
सपनें, रोटियां और
खुशियां
देखता गाँधी
मुस्कराता है बुद्ध
जमा होते हैं जुलूश की शक्ल में
चौराहे पर नुक्कड़ों पर
मौते सौदागर
शुरू होती है
शांति मार्च की औपचारिकताएं
फिर खामोशी की घाटियों में
सौदागर
लगाता है छलांग लगातार
और
बांध लेता है
अपनी मुट्ठियों में
शोर और सन्नाटे ।

चिड़िया

एक चिड़िया
बैठी है घोंसले में
बीमार है वर्षों से
दाना भी नहीं चुगती
पानी भी नहीं पीती
पीती है सिर्फ आँसू
देखती है सबकुछ
मगर सुना है
अभी भी वह
देती है सोने के अण्डे।

भूख

भूख एक सबाल है
जो परिभाषा की पेट से
कभी नहीं उगती
यह एक अस्तित्व है
जो जरुरत की
जमीन पर/संवेदना की आँधी में
जिन्दा रहती है
यह एक सम्पूर्ण ऊर्जा है
जो आग की भाषा में
बोलती है और
आदमी के अंदर
बिच्छू की जहर सी
बगावत की शैली में
उतरती है।

आतंक के जंगल में

आतंक के जंगल में
खामोश है संवेदना
आहत है अनुभूति
गहराया है आक्रोश
शांति और अहिंसा की सीख से
करता है शोषण
रटाता है
मर्यादा और संस्कृति का सबक
बांचता है गीता
देता है कुरान का ईमान
बोलता है ईसू की बाणी
फूटता है क्रोध
इतिहास की कब्रों से
क्योंकि चरित्रहीनता
की चक्रव्यूह में
फंसा है अकेला
अभिमन्यु
मूक है अर्जुन की गांण्डीव
निस्तेज है भीम का गदा
युधिष्ठिर की शांति और
सहिस्णुता ने
कर लिया है
लज्जा का भी शीलहरण ।

कविता

आयी चंद्रिका धवल

अन्नपूर्णा बाजपेयी
कानपुर (उ0प्र0)
मो0 : 9236555679

चाँदी के रथ पे सवार लिए जीवन नवल
चिर प्रीतम संग चंद्रिका आयी धवल .....
प्रिय सखी निशा संग
भरती किलकारियाँ
गगन से धरा तक
करती अठखेलियाँ
रुप किशोरी सी चंद्रिका आयी धवल .....
शशि प्रियतम संग
चमचम सितारों वाली
श्याम चुनरिया ओढ़े
धीरे-धीरे दबे पाँव
प्रिय सुंदरी सी चंद्रिका आयी धवल .....
दुग्ध अभिसंचित हये
सभी तरुवर तड़ाग
मुस्कुराती बलखाती
ममता सी दुलारती
माँ सी चंद्रिका आयी धवल .....
रागिनी सुनाती राग
कलरव करता विहाग
नीरवता का आवरण
तम बंधनों को तोड़ती
सुर सुंदरी सी चंद्रिका आयी धवल .....
निशा थक कर जाने लगी
उषा भी आने-आने लगी
गीत मिलन के गाने लगी
पुनर्मिलन की अभिलाषा में
चिर प्रीतम संग चंद्रिका चली धवल .....
चाँदी के रथ पे सवार लिए जीवन नवल
चिर प्रीतम संग चंद्रिका आयी धवल .....

कविता

विवाद

आशीष बिहानी

दिन दहाड़े
अढ़ाई बजे की तपन में
अँधेरा हो गया है
धुंध के घाघरे पहन कर
दौड़ रहे हैं बादल
बदहवास हो
पत्थरों और तिनकों की
घातक बारिश
जगा देती है धरा को
आकुल होकर
उठती है वो
धड़कते हृदय को संभालकर
ढकती है अपनी आवाज
आश्चर्य, रोष और दु:ख के साथ
दुस्साहसी पर्वतों का
महायुद्ध अपने चरम पर है
फैली हुई लाल आँखों से
गुस्सा उडेल रहें हैं वो
एक दूसरे पर
प्रतिद्वंद्वी को अपने गौरव से
अपदस्थ करने को उद्धत
दूर करना होगा धरा को
इन शक्तिशाली मूर्खों को
भरना होगा विवादों और आरोपों
की खाई को
रुई और प्यार से
परन्तु...
आसान नहीं है रक्ततलाई पर
पेन्ट करना मुहब्बत को

कविता

इंतजार में.

शतदल मंजरी
गुड़गाँव, हरियाणा
मो0: 8292090400

तुम्हें देखना, बस देखते जाना
हाथ में हाथ डाल
बैठना, चुप रहना
तुम्हारी उँगलियों से खेलना
साथ–साथ घुमना
धड़कनों से धड़कने जोड़
बोलना
तुम्हारे साथ–साथ बहना
साथ–साथ थमना
और
क्या चाहता था तुमसे
शायद तुम्हें भी एतराज न था
कहीं तुम्हारा भी था मन
पर
भरोसा नहीं था कि
मैं इतने पर रहूँगा
जहाँ तक तुम चलोगी
मैं भी चलूँगा ...
हर वारिश बाद
खुलते आसमान में
एक इन्द्रधनुष होगा तुम पर
मैं कहाँ याद रहूँगा ...
फिर भी
अगली अवधि तक रहूँगा
खड़ा
यहीं, इसी जगह
तेरे इंतजार में... ।

कविता

फिर सड़क पर

सरिता दास

हाथों में फूलों का गुच्छा लिए
सड़क पर बदहवास सी
वो लड़की
कितनी उम्मीद परस्त थी
दो वक्त की रोटी के लिए
सड़क किनारे पड़ी
बीमार माँ की दवाई
थी शायद जरुरत उसकी
आँखों में आंसू लिए
दौड़ती वो लड़की
उम्मीद भरी नज़रों से
एक एक गाड़ी रोकती
फूल ले लो
कम दाम में दे दूंगी
दस रुपये का ही है ले लो
पर कहाँ थी मानवता बची
लोगों में
नहीं खुली एक भी खिड़की
नहीं बिक पाया उसका
एक भी फूल
यदि वो मांगती भीख
तो सलाह देते सभी
कमाकर खाओ
चार ही फूल थे निकल पड़ी बेचने
मजबूर थी कमजोर नहीं
एक बार फिर देखा माँ को
आंसू पोछे निकल पड़ी
फिर सड़क पर
हाथों में फूलों का गुच्छा लिए

कविता

मुक्तक ऐसा रच...

तरुण जैन

मैं एक अधूरी सी कविता ठहरी
तुम कोई उलझे; अपूर्ण छंद
अपनी लय में मैं रच गई हूँ
तुम हो गये मात्राओं में बंद
निर्झर गिरती धार सी
निर्मम चट्टानों से टकराऊं
कुछ यहाँ–वहाँ; टीसती रिसती
थमती–बहती, तुम तक आऊं
तुम्हारी भी श्रृंखलाएं
असंख्य हैं; बड़ी हैं
बाहर तो हैं थोड़ी
अंतर्मन पर अधिक जड़ी हैं
बिखरा कर पल भर सब
मृदु मंद समीर कब हो पाते
हौले हाथ थाम; क्षण भर
स्वपनिल एक सैर करा लाते
काश! मैं तनिक रुक पाती
और तुम जानो थोड़ा बहना
मैं कुछ–कुछ सुनना जानूं
तुम तनिक बिन तौले कहना
रहना है तुमको भी मुझको भी
इसी ब्रह्मांड की सीमाओं में
श्वासों पर कब तक नियंत्रण
संभव; विषाक्त हवाओं में
मुक्तक ऐसा रच ओ मेरे मीता!
ताल, गणना सब खो जाएं,
हलाहल ठहरा जो इस पल
दूजे में अमृत हो जाए .....

कविता

त्रिगुणातीत होने का गर्व

आशीष बिहानी
हैदराबाद
मो0 : 9462360545

राजपथ के किनारे
रात के बादलों से घिरी
एक लड़की को
हवाएं चूमती हैं
और कपड़े सहलाते हैं
पर वह महसूस नहीं करती
घसीटती हुई चलती है
अपने पैरों को
कंकड़ीली धरती पर
दिशाओं में कुत्ते गुर्राते हैं
और निहारते हैं नीम के पेड़
प्यार और गोलियाँ
वर्षा और विघटन
गले मिलते हैं
दीर्घ उच्छश्वास
उत्तेजित रोम
आत्मविश्वास
भोंहे कानों की और
अस्तित्व के फूल खिलते हैं

एक बार फिर
यकायक भान हुआ है
त्वचा को स्पर्श का
दृष्टि को उपस्थिति का
समाप्त हो गया है प्रलय
उदय हुआ है आह्लाद का
उधर तूफानों के परे
आसमान में कहीं
एक ईश्वर
उत्सव और समृद्धि की ढेर पर बैठा
देखता है इस सूक्ष्म
नगण्य जीवन को
परिवर्तित होते
नापता है उसे
अपनी हथेली की तुलना में
व्यंग्य भरी हंसी हँसता है
द्रुत निःश्वास के साथ
बड़ा गर्व है उसे
अपनी विशालता पर
शक्ति पर
त्रिगुणातीत हाने पर .....

कविता

विश्वास

सुमित्रा पारीक
केकड़ी, अजमेर (राजस्थान)

शब्द शब्द महक रहा
विश्वास के फूलों के खिलने से.....
फफोले हो जाते हैं जीवन की
पगथलियों में जब ना भरोसाई का तेज़ाब
डाल दिया जाता है सरसाते.... फलते रिश्तों पर
स्नेह पकने लगता है
पीप रीसने लगता है
हर्षाते पलों से
समर्पण नासूर बन कर.....
दायित्वबोध ही
लहूलुहान हो कर
चलने का हौसला देता रहता
नहीं तो बड़े होने का
अहंकार तो कब का ही
खजूर का पेड़ बना देता ...
आज !!
मैं उन महक रहे फूलों
की मादक महक से
सपनों की इत्रदानी
भर लूं ... जी भर के ...

सोच सारी...

बृजेश नीरज
छितवापुर रोड, लखनऊ (उ0प्र0)

सोच सारी लिजलिजी होने लगी
वृत्ति जग की क्लिष्ट सी होने लगी
सोच सारी लिजलिजी होने लगी
भीड़ है पर सब अकेले दिख रहे
भावनाओं में कमी होने लगी
चाहना में बजबजाती देह भर
व्यंजना यूँ प्रेम की होने लगी
धर्म के जब मायने बदले गए
नीति सारी आसुरी होने लगी
सूखती संवेदना घर–घर दिखे
चेतना भी ठूँठ सी होने लगी
ढूँढ लाएँ अब कहाँ से हम किरण
रात सारी मावसी होने लगी।

गज़ल

डा. मनाजिर आशिफ हरगानवी
कोहसार, भीखनपुर–3
भागलपुर (बिहार)

इक दीवाना है जो फिरता, बस्ती बस्ती शहरों शहरों
बहता पानी जोगी रमता बस्ती बस्ती शहरों शहरों
देखन को संसार की लीला ओढ़ के कमबल तन्हा निकला
एक तमाशा खुद भी बनता बस्ती बस्ती शहरों शहरों
कोई उसपर पत्थर फेंके कोई अपना माथा टेके
वह है अपनी धुन में चलता बस्ती बस्ती शहरों शहरों
उसकी अपनी एक है दुनिया दश्ता–दरिया, वादी सहरा
सीधा–सादा उसका रास्ता बस्ती बस्ती शहरों शहरों
दरिया में हो या साहिलपर दुनिया भर का गम है दिल पर
वह दुनिया की रीत पे कुढ़ता बस्ती बस्ती शहरों शहरों
मन मंदिर में इक देवी जिस की पूजा उसकी मस्ती
रोता धोता हस्ता गाता बस्ती बस्ती शहरों शहरों
वह भक्ति की गोद का पाला, पहिने हैं रूद्राक्ष की माला
जैसे सूरज चाँद निकलता बस्ती बस्ती शहरों शहरों
उसके दम से है खिलती जो ज्ञान गुनों की फुलवारी भी
सच ही सुनता सच ही कहता बस्ती बस्ती शहरों शहरों
एक मनाजिर किस गिनती में सारा जग है आशिक उसका
कोई ज्ञानी है वह लगता बस्ती बस्ती शहरों शहरों

ग़ज़ल
2

इस ज़मीं पर कारोबार ए आसमाँ चलता रहेगा,
तुम चलो या ना चलो, ये कारवाँ चलता रहेगा.

हम तरक़्की की मशालें ले के बढ़ते ही रहेंगे,
रोशनी के साथ थोड़ा सा धुआँ चलता रहेगा.

जब तलक तर्क़एतआल्लुक या सुलह मुमकिन न होगी,
कुछ न कुछ तो तेरे मेरे दरमियाँ चलता रहेगा.

ये सियासत अपने अपने मुल्क में चलती रहेगी,
मसअलों के साथ ही अम्न ओ अमाँ चलता रहेगा

एक दिन दुनियाँ हमारे पीछे पीछे ही चलेगी
आगे आगे हिंद का क़ौमी निशाँ चलता रहेगा

गीत

तब तुम मुझको याद करोगी

अभिनव अरुण
वरिष्ठ उद्घोषक, आकाशवाणी वाराणसी
मो0–09415678748

सूनेपन की रेत पे लम्हे दु:ख की सुबहो – शाम लिखेंगे
थाम के तेरी नाजुक उंगली भूला सा एक नाम लिखेंगे
दिल के दस्तावेज की स्याही जब आंसू से धुल जायेगी
सर्द हवा के हलके झोंके से जब तन्द्रा खुल जायेगी
ख्वाब में तेरे भूला चेहरा बनकर तुझको छल जाऊँगा
तब तुम मुझको याद करोगी और मैं तुमको याद आऊँगा ।

शाम किसी जब घर की देहरी पर तुम बेमन सी बैठोगी
दूब की एक टहनी को लेकर अपनी उंगली में ऐंठोगी
चाँद सा कोई झिलमिल चेहरा भी ना मन को भा पायेगा
सांझ की उस झुरमुट में मैं घायल जुगनू बन आ जाऊंगा
तब तुम मुझको याद करोगी और मैं तुमको याद आऊँगा ।

कोई भुला सा एक नगमा जब होंठों से फूट पड़ेगा
या पन्नों के बीच दबा सूखा गुलाब जब छूट पड़ेगा
दर्द में डूबी तेरी सासें रात की रानी सी महकेंगी
खुशियों के मोती चुनने में जीवन की कश्ती बहकेगी
लहरों में तेरा चेहरा बनकर मैं तुझपर छा जाऊंगा
तब तुम मुझको याद करोगी और मैं तुमको याद आऊँगा ।

सावन के आने की आहट तेरी आँखें नम कर देगी
हरे भरे खुश रंग रुप में खुशी भी आना कम कर देगी
भादो की बरछी सी बौछारें जब सीने को बीन्धेंगी
तेरी आँखें गये वक्त की याद के बिरवे को सींचेंगी
बीच बादलों के मैं बिजली बनकर तुझको चौकाऊंगा
तब तुम मुझको याद करोगी और मैं तुमको याद आऊँगा ।

जेठ की तपती दोपहरी में सूनापन खाने दौड़ेगा
बेचैनी का सूत्र ढूँढ़ने तेरा भोला मन भरमेगा
कोई नन्हा सा बच्चा जब खेलेगा तेरे आँचल से
चिहुंक उठोगी दरवाजे की हिलती बजती सी सांकल से
सांकल की दस्तक में ढलकर बच्चे की आँखों में पलकर
स्वप्न सुहाना दिखलाऊंगा तुमको जीना सिखलाऊंगा
तब तुम मुझको याद करोगी और मैं तुमको याद आऊँगा ।

जब भी पढ़ोगी नज्में मेरी या ग़ज़लों को तुम गाओगी
आँखों से ढलते अश्कों में अपने अभिनव को पाओगी
साथ किसी का हाथ भले हो कसक तो होगी सीने में
खुद से कहोगी तुमभी अक्सर क्या रखा है जीने में
असमंजस की मन:स्थिति से तुमको वापस लाऊंगा
तब तुम मुझको याद करोगी और मैं तुमको याद आऊँगा ।

गज़ल

सच को अपनाने का

सच को अपनाने का जब ऐलान किया,
सबने मुझ पर बाणों का संधान किया।
जागो रण में नींदें भारी पड़ती हैं,
अभिमन्यु ने प्राणों का बलिदान किया।
आंसू की दो बूँदें टपकी पन्नो पर,
मैंने अपने किस्से का उन्वान किया।
सोने की अपनी–अपनी लंकाएं गढ़,
हमने खुद में रावण को मेहमान किया।
देश निकाला देकर सारे पेड़ों को,
हमने अपने शहरों को वीरान किया।
भूख ग़रीबी महंगाई दो दिन के हैं,
कुबड़े काने राजा ने फरमान किया।
दूषित होकर भी गंगा गंगा ही है,
बेशक हमने अपना ही नुक्सान किया।
वृद्धाश्रम में नाम लिखाकर भूल गए,
हमने अपनों का ऐसा सम्मान किया।
बाहर बाहर उन्नतशील लबादे हैं,
भीतर भीतर मूल्यों को शमशान किया।

गजल

कभी किसी का शोर मचाना

डॉ0 कमलेश द्विवेदी
कानपुर (उ0प्र0)
मो0 : 09415474674

कभी किसी का शोर मचाना माने रखता है
कभी किसी का चुप रह जाना माने रखता है
गलती को गलती ना माने तो यह गलती है
पर गलती करके पछताना माने रखता है
हमने माना पहुँच चुके हैं हम काफी आगे
फिर भी गुज़रा हुआ ज़माना माने रखता है
कल तक हम भी बंजारों सा घूमा करते थे
अब है अपना ठौर–ठिकाना माने रखता है
कैसे मानें इनमें–उनमें कुछ सम्बन्ध नहीं
रोज़ किसी का आना–जाना माने रखता है
सिर्फ उदासी ही देखी हो जिसके चेहरे पर
उसका थोड़ा भी मुस्काना माने रखता है।

गजल

क्या होगा...

अशोक मिज़ाज
मकरोनिया, मध्य प्रदेश
मो0–09926346785

बदल रहे हैं यहाँ सब रिवाज क्या होगा
मुझे ये फ़िक्र है कल का समाज क्या होगा
लहू तो कम है मगर रक्तचाप भारी है
अब ऐसे रोग का आख़िर इलाज क्या होगा
दिलो दिमाग के बीमार हैं जहाँ देखो
मैं सोचता हूँ यहाँ राम राज क्या होगा
न सुर समझते हैं ये और न ताल की संगत
यमन सुनाओ इन्हें या खमाज क्या होगा
हरेक सिम्त हैं दशहत, तनाव के मंज़र
हरेकशख़्स सवाली है, आज क्या होगा
बदल रहे हैं ज़ुबानों–बयान के तेवर
अब आने वाली ग़ज़ल का मिज़ाज क्या होगा?

स्पेनवासी कोलम्बस ने अमेरिका महाद्वीप की खोज की। उनके सम्मान में एक प्रीतिभोज का आयोजन हुआ। भोज में आये एक व्यक्ति ने कहा – 'यह कौन सी बड़ी खोज हुई, ऐसा तो कोई भी करना चाहता तो इसके पूर्व ही कर डालता।' कोलम्बस ने सुना तो सभी गणमान्य सज्जनों को एक उबला अंडा मेज पर खड़ा कर देने को कहा। सबने प्रयास किया किन्तु कोई सफल न हो सका। कोलम्बस ने अंडे को लेकर उसका एक नुकीला सिरा तोड़ दिया और मेज पर स्थिर खड़ा कर दिया। सभी चिल्ला उठे–'ऐसा तो हम भी कर सकते थे।' कोलम्बस ने कहा– 'कर तो सकते थे किन्तु किया नहीं। कुछ करने के लिए सूझ–बूझ की आवश्यकता होती है, साहस, धैर्य और संयम की जरुरत होती है।' सभी को कोलम्बस की सराहना करनी पड़ी।

लघुकथा

घड़ी की सुई

डॉ. अनुज प्रभात
फारविसगंज (बिहार)
मो0–9470023249

दीपावली..... धनतेरस..... जगमगाती रात। दुकानें सजी–सँवरी..... सड़कें भरी..... भीड़..... खचाखच..... खरीद्दारी की। मैं भी अपनी पत्नी और छोटे बेटे के साथ शामिल उस भीड़ में।..... उनकी लम्बी लिस्ट और दुकान – दुकान रूकती तोल–मोल में। मैं पीछे–पीछे केवल बैग संभालने वाला....। तभी हमने देखा, दो बृद्ध साथ–साथ चल रहे हैं। कभी किसी चीज का.. ..... कभी चीज का भाव पूछ हमने उन्हें ब्रिटिश युग के चाँदी के सिक्के की कीमत पूछते देखा, फिर ताम्बा के बर्त्तन, फिर पीतल.... .. स्टील आदि का भाव पूछते देखा। फिर मैंने देखा कि वे वहाँ जाकर रूक गये जहाँ मेरी पत्नी लैम्प खरीद रही थी। शहर है, बिजली है फिर भी लोग लैम्प युग जिन्दाबाद।

उस वक्त मैं थोड़ा पीछे था। लेकिन मेरी जिज्ञासा बढ़ गई थी। मैंने धीरे–धीरे कदम बढ़ाते हुए वॉच करने का निर्णय ले लिया और तब देखा कि मेरी पत्नी तोल–मोल कर बीस रूपये में जब एक लैम्प खरीदकर आगे बढ़ गई तो उसने भी एक लैम्प को उठा लिया और दुकानदार से कुछ पूछे बगैर बीस रूपये देकर वहाँ से निकल गये। दुकानदार चुप। वह भी समझ गया कि पूर्व के तोल– मोल को वह देख चुका था।

अब मेरी उत्सुक्ता और बढ़ गई। अक्सर लोग साथ–साथ चलते हुए कुछ न कुछ बाते अवश्य करते हैं लेकिन सामान का दाम पूछने और लैम्प खरीदने के बीच उनमें कोई बातें नही हुई। मैंने तेजी से कदम बढ़ाकर श्रीमती जी से कहा – '' मुझे घड़ी बनवानी है, गुप्तावाच में रूकुँगा, तुमलोग वहीं आ जाना'' और बिना विलम्ब किए मैं उन दो बुजुर्गो के पीछे हो लिया।

वस्तव में मेरी घड़ी थोड़ी स्लो चल रही थी। अवसर नहीं मिल रहा था। आज चूंकि पूरे बाजार का चक्कर था, इसलिए सोच कर ही चला था। गुप्ता वाच में दिखाने को। संयोग वे दोनों उसी ओर बढ़ गये..... स्टेशन चौक की ओर जहाँ मुझे घड़ी ठीक करवानी थी। फिर मैंने देखा। वे दोनो स्टुडेंट बुक डीपो के पास ठिठक गये। उनमें से एक ने आने का ईसारा करते हुए उस दुकान से कलम खरीदी।

कलम खरीदने के बाद जब वे आगे बढ़े तो उनमें से एक की आवाज सुनाई दी–''तुमने लैम्प मेरे लिए खरीदा है न... ...?'' तभी दूसरे ने पहले से कहा–'' और तुमने कलम मेरे लिए खरीदा है न.....?'' और फिर दोनो ठहाकामार कर हँस पड़े।

और जब रूका तो दोनो ने एक साथ कहा–'' हमारे कमरे की बत्तियाँ इसलिए बुझा दी जाती है कि बिजली का बिल उठेगा, जबकि उनके कमरे में रात के दो बजे तक टी.वी., डी.वी. डी आदि चलता रहता है।''

तभी एक ने पुनः कहा–'' चलो इस दीवाली का धनतेसर अच्छा रहा। वर्षो बाद हमने चाँदी, ताम्बा, पीतल के दाम पूछे। नये युग के नये लोग हैं घर में इसलिए पसन्द अपनी अपनी है। क्या खरीदते हैं..... क्या लाते हैं अब तो वही लोग जाने। पर हमने जो खरीदा, बेसकीमती खरीदा। अब हमलोग जितनी रात तक चाहे मंदिर–मस्जिद की सीढ़ियों पर बैठ सकेंगे। तुम मेरे लैम्प की रौशनी में रामायण पढ़ना..... और तुम मेरी कलम से गजल लिखना।'' .....एक बार फिर ठहाका।

मैं स्तब्ध था, उन दो बुजुर्गो की बातें सुनकर अभी कुछ उसपर सोच पाता, मेरी पत्नी ने मुझे टोकते हुए कहा–'' चलिए घर चलिए.....बहुत देर हो गई है। खाना भी बनाना है... ...नहीं तो सब सीरियल छूट जायेगा।''

और मैं वहीं से लौट गया। मेरी घड़ी की सुई स्लो की स्लो रह गई। बस ध्यान में आया ..... घर पर अकेली बैठी माँ का.....।

लघुकथा

बदलाव

उमाकांत भारती
भागलपुर
मो0–8541961693

कई वर्षो के बाद बभनियाँ गाँव से कोई बारात सजधज कर जाने वाली थी। पाँच दिन पहले से ही मास्टर सुशांत के पक्के घर की छत पर लाउडस्पीकर कान–फोड़ आवाज में घनघना रहा था।

लड़कीवाला कमर का बड़ा मजबूत है – पाँच सौ बराती की मांग की गई है। एक दिन मरजाद रहेगा। तीन शाम दंगल भोज होगा। सात तरह की मिठाइयाँ खाने को मिलेंगी। पटना के बड़हिया से वत्तक के अंड़े से भी बड़ा– बड़ा रसगुल्ला आ रहा है। मनेर से मोतीचूर का लड्डू। आगरा से पैठा! आरा के उदवंतनगर से बेलग्रामी! नालंदा से सिलाव का खाजा! बाँका के पुनसिया से पेड़ा कहलगाँ से रसकदम और गंगापार नवगछिया से आ रहा है खाँटी दही, मोटी–मोटी छाली! पत्तल पर भर–भर कटोरा चलेगा दही और पुड़ी, महानंद चतुर्वेदी बखान करते हैं।

इस बार यजमानी करने में मजा आएगा। अब इतनी धूमधाम और ठाटबाट से शादी–ब्याह होती कहाँ? आजकल तो लोग भोज–भात और दक्षिणा के डर से इधर–उधर मंदिर और देवस्थलों में जाकर गुपचुप शादी करने लगे हैं। इससे मारे जाते हैं हम गरीब लोग! नाऊ–ब्राह्मण की आय पर ताला पड़ गया है। अब यजमानी करने से पेट भी नहीं भरता। दिनभर बैठे–बैठे मक्खी मारना पड़ता है हमें! लेकिन इस बुढ़ापे में ई पोथी–पतरा को लताक देकर हम कहीं और जा भी नहीं सकते न! सुनने में आया हैं ..... . दो सौ एकावन रूप्पया नगद और एक जोड़ी ब्रासलेट– धोती मिलेगी आपको 'पंडी जी'।

पाँचू नाई ने लहरनी से उनके पैर की उँगलियों के नख काटते– काटते जिंदा नख काट दिया जैसे! उन्होने तड़पकर अपने पैर खींच लिए।

पाँच जन सुन रहे थे। सबके सामने अपशब्द कह दिया पाँचू ने!

..... और तुम्हारी नाऊनिया को मिलेगी बनारसी – साड़ी। पहनकर तुम्हारी औरत नाचेगी बारात में छम! छम! छम ! छम ! ..... छमा – छम ..... छम ! छम ! छम !..... और पाँचू ढोल बजायेगा ..... ढम..... ढमा – ढम .....ढम! ढम ! ढम ! ... .

चतुर्वेदी जी की बातें सुनकर पाँचू की पत्नी कारी ने हँसते हुए कहा – हमें मंजूर है, लेकिन आपको भी फूंकना पड़ेगा शंख ! चिडचिड़ाकर चतुर्वेदी जी ने कहा ठीक है। आज मैं तुमको नचाकर ही दम लूँगा। अभी फूँकता हूँ शंख।

तब कारी ने हाथ नचाते हुए पुनः हँसते हुए कहा – तीन बार फूंक मारते हैं, तब एक बार आवाज निकलती है, 'फूस'। मालूम ही नहीं पड़ता कि आवाज शंख से निकलती या आपकी धोती के ढेका से ।..... लेकिन मेरा मरद जब फूंकता है आपका ई शंख, तो एक ही फूंक से पूरा गाँव अनजोर हो जाता हैं। ... . अब आपके लिए यह शंख नहीं, बल्कि घोंघा जैसा है। क्यों इसका बोझ उठाये फिरते हैं? ..... दे दीजिए मेरे मरद को। आपका 'प्रोवसी' कर देगा।

चतुर्वेदी जी सोचने लगे.....।

लघुकथा

उत्कर्ष

महेन्द्र मयंक
खलीफाबाग, भागलपुर (बिहार)
मो0–9507172700

सजलपुर एक छोटा गाँव था। जहाँ एक मंदिर था, गाँव के जमींदार आनन्द नारायण बनबाया था। मंदिर का पुजारी मणिकान्त पत्नी माधुरी के साथ रहता था, उसका एक बेटा शशिकान्त था।

जिन्दगी मजे से कट रही थी। पंडित का बेटा शशिकान्त पढ़ने में मेधावी था। गुरु जी शशि को बहुत प्यार करते थे।

समय का कुचक्र चला, पंडित मणिकान्त बीमार पड़ गये। देहाती इलाज चलता रहा, पर वो बच नहीं पाया। पत्नी माधुरी रो धो कर रह गई। बेटे की पढ़ाई और मेरा भरण–पोषण कैसे होगा, जिन्दगी दो टूक हो गई, हरी घास सूख गई।

जमींदार आनन्द नारायण को तरस आ गई पंडिताइन पर, और माधुरी को पूजा करने की जिम्मेदारी सौंप दी। शशि गाँव के मिडिल स्कूल से पास कर गया, वो भी प्रथम श्रेणी से। अब पुजारिन माधुरी को चिन्ता सताने लगी कि अब आगे की पढ़ाई कैसे करेगा। पुजारिन को रात में निन्द नहीं आती।

पंडिताइन को एक उपाय सुझा क्यों न जमींदार साहब का आशीर्वाद प्राप्त कर ली जाय, क्योंकि आनन्द बाबू काफी दयालू व्यक्ति है, गाँव समाज उनकी सहानुभूति से जिन्दा है।

शाम की आरती में जमींदार साहब आये हुये थे। माधुरी सोची क्यों न इस मौका से फायदा उठाया जाय, और आरती की थाली से रोली चन्दन लगाकर प्रसाद दी। पुजारिन माधुरी की उम्र मात्र पैतीस–चालीस की थी, गौर वर्ण सुन्दर नाक–नक्सा बाली थी। जमींदार आनन्द बाबू एक टक देख कर रुक गये, पुजारिन इसी वक्त का इन्तजार में थी।

पुजारिन माधुरी मन की बातें आनन्द बाबू को कह डाली। पुजारिन की सारी बातें मान गये।

हाई स्कूल सजलपुर से चार किलो मीटर की दूरी पर था। जमींदार साहब शशिकान्त का नामंकण करा कर सारी व्यवस्था कर दिया। शशिकान्त काफी मेहनती लड़का था। वह क्लास में प्रथम आने लगा।

माधुरी अपने बेटे पर गर्व करने गली, एक दिन मेरा बेटा अवश्य ही ऑफिसर बनेगा, इसके लिए उत्सर्ग होना कोई पाप नहीं है, इसकी जिन्दगी बन जाय, यही मेरी लालसा है। माधुरी बहुत खुश थी।

इधर जमींदार साहब का मंदिर आने जाने का सिलसिला दिन प्रतिदिन बढ़ते गया। आरती की थाली अब जमींदार के लिए सजती चली गई। जमींदार आनन्द बाबू सारी मर्यादाओं को लाँघ गये। इस बात की चर्चा गाँवों में होने लगी, लेकिन जमींदार साहब के सामने किसी की मुँह नहीं खुलती। पाप को पुण्य समझने लगे।

शशिकान्त बोर्ड परीक्षा में प्रथम आया, राज्य भर में चौथा स्थान प्राप्त किया। अखबार में फोटो भी छपी। माँ माधुरी उज्जवल भविष्य की कामनाएँ करने लगी ''बेटा शशि एक दिन अवश्य ही ऑफिसर बनेगा''। पुनः माधुरी के सामने समस्या खड़ी हो गई जमींदार साहब तो इतना निभा दिये, अब आगे की पढ़ाई कैसे होगी–एक प्रश्न आ खड़ा हुआ।

जमींदार साहब का एहशान भुल नहीं सकती, लेकिन अब राशि बड़ा हो चला था शशि सोचने लगा, कॉलेज की पढ़ाई कैसे होगी और जमींदार के चंगुल से माँ को कैसे मुक्त किया जाय, क्योंकि आनन्द बाबू का घिनौने पन का अनुभव, शशि को हो चला था। माँ पर लगे दाग को मिटाना चाहता था। यह सोचकर माँ को लेकर शहर चला गया। अब तो टयूशन कर के भी, अपना और माँ का पेट भर लूँगा।

सुबह होते ही शहर पहुँच गया। माँ को प्लेटफार्म पर बिठा कर, आशियाने की तलाश में चला गया।

घुमते फिरते, माँ के पास आ गया–बेटा मिल गया डेरा, नहीं माँ यहाँ तो बहुत लफड़ा है, पहले तो शिनाक्त खोजता है, जो मुझे पहचाने। इस शहर में मुझे कौन जानता है, फिर किराया तो इतना है कि हम दे नहीं सकते– अच्छा बेटा कुछ खा लो जब आये है तो, भगवान कोई सहारा भेंज ही देंगे, घबड़ाओ मत–प्रसाद का लड्डू खाओ, चिन्ता मत करो बेटा।

तुम उधर गया मैं एक टक से सामने बाला मंदिर को देख रही थी। तुम बैठो मैं उस मंदिर के पुजारी से मिलती हूँ। पूजा–पाठ तो मुझे करने आती ही है, ब्राहमण कूल की हूँ। प्रयास करती हूँ, ठीक है माँ दो चार साल यूहीं कट जायेंगे। जब हमारी नौकरी लग जायेगी, फिर क्या है, इसी शहर में बस जायेंगे।

हरी–भरी घास देखकर कौन मवेशी खाना नहीं चाहेगा, और सुखे पेड़ में आग जल्द लग जाती है। विशाल प्रवेश द्वार के सामने मंदिर में विराजमान राधा कृष्ण का दर्शन हुआ बरामदें में

व्यास गद्दी पर बैठे पंडित चन्द्रमणि विराजमान थे।

माधुरी पंडित जी को प्रणाम की, कुछ बोलना चाहती थी माधुरी, पर बोलने में सकुचा रही थीं, पंडित जी भाप गये, कहिये कुछ कहना चाहती हैं आप– कहना तो चाहती हूँ, पर हिम्मत नहीं हो रही है– अरे इसमें सकुचाने की क्या बात है– आप कहाँ से आई हैं मैं गाँव से आई हूँ, मेरे साथ– मेरा बेटा भी है, वह प्लेटफार्म पर इन्तजार कर रहा है। फिर मैं आप की क्या मदद कर सकता हूँ यही दो चार रोज यहाँ रहने की अनुमति मिल जाती, मैं भी मंदिर का पूजारिन थी, उसे छोड़ कर बेटे के साथ शहर आ गयी हूँ मेरा बेटा पढ़ने में बहुत मेधावी है, उसे ऑफिसर बनाना है।

पहले यह बतायें– आप का क्या नाम है? मुझे माधुरी कहते हैं, और बेटा शशि है। ऐसा कीजिए आप शशि को लेकर मेरे साथ आइये व्यवस्था हो जायेगी।

पाँव छू कर शशि प्रणाम किया पंडित जी को, देखो बेटा– तुम्हारी माँ से सारी बातें मालूम हो गई। रहने को है, रह जाओ मंदिर परिसर में बहुत जगह है, पर बेटा एक शर्त है, तुम्हें मेरे बेटे को पढ़ाना पड़ेगा। एक छः साल का है दुसरा चार साल का। रिजल्ट अच्छा होना चाहिए नहीं तो माँ बेटे को मंदिर से निकाल दूगाँ।

पं0 चिन्तामणि के प्रयास से शशि का अच्छे कॉलेज में एडमिशन हो गया। शशि को बाहर जाकर ट्यूशन करने की जरुरत नहीं पड़ी। माँ बेटे की परिवरिस मंदिर से ही होने लगी।

माधुरी पुनः पुजारिन बन गई, आरती का पैसा–आधा पंडित जी लेते और आधा पुजारिन माधुरी को मिल जाता उस पैसे से शशि का फीस और अन्य चीजों में खर्च होता।

मंदिर में रह कर शशि और माधुरी आनन्दमय जीवन व्यतित करने लगी। समय गुजरते देर न लगी और शशि बी0ए0 पास कर गया। शशि कम्पीटिशन की तैयारी में लग गया, अच्छे दिन के इन्तजार में माधुरी समय गुजार रही थी। शशि कम्पीटिशन पर कम्पीटिशन दे रहा था, पर सफलता हाथ नहीं लग रही थी।

शशि चिन्तित रहने लगा। जो भी माँ के पास आता पूछ बैठता माधुरी ! बेटा को नौकरी मिली। क्या कहें माँ। आज पैसा और पैरबी का जमाना आ गया, जब कि इन्टरव्यू में एक भी प्रश्न को नहीं छोड़ता, इससे अच्छा होता मैं विक्लांग पैदा होता नौकरी पक्की थी।

माँ थोड़ा पंडित जी से पैरबी कर दो, तो नौकरी मिल सकती है। इस शहर में चाचा को कौन नहीं जानता, राजधानी में बड़े से बड़े वी0आई0पी0 से इनका सम्पर्क है। अच्छा आज आरती के बाद उनसे इस विषय में बात करती हूँ।

आज माधुरी पुराने रुप में आ गई थी शिल्क साड़ी में सज धज कर– आरती करने चली गई। चिन्तामणि दखते रह गये इतनी अच्छी पुजारिन को इससे पहले कभी नहीं देखा था आज फिर पुण्य को त्यागने में उतारु हो गई, बेटे के लिए पूनः उत्सर्ग हाने के लिए ठान ली, माधुरी का एक ही लक्ष्य था कि शशि को किसी तरह नौकरी मिल जाय।

आरती हो गई, भगवान को भोग लग गया प्रसाद वितरण कर दी लेकिन पंडित का जिज्ञासा आसमान पर चढता जा रहा था। कामना मंदिन में बिखर रही थी आँखों में चाहत बगुले के ध्यान से औझल नहीं हो रहा था, आरती की थाली में सहानुभूति सावन भादो की बर्षात से कम नहीं थी, दोनों रिमझिम बर्षा में नहाना चाहता थे, इतने में शशि आया– माँ–माँ मुझे नौकरी मिल गई रेशमी साड़ी में शशि लिपट गया माधुरी बेटे को चुमने लगी, आँखों में खुशी के आँसु आ गये। माधुरी चन्द्रमणि के पॉवों पर गिर गई उठो माधुरी तुम्हारा संकल्प पूरा हुआ।

शशि के अच्छे दिन आ गये। चाचा की पैरबी काम आ गया। माँ! देखो मुझे नियुक्ति पत्र मिल गयी– नहीं तो जिन्दगी भर भटकते रहते नौकरी नहीं मिलती। माधुरी भाव विह्वल हो गई। पंडित जी, शिल्क की साड़ी में लिपटी पूजारिन माधुरी के लावण्य में समा जाना चाहता था।

महाराज जी आप शरण नहीं दिये रहते तो मैं इस शहर में मिट जाती, बेटे की जिन्दगी बर्वाद हो जाती। नहीं माधुरी जी, यह सब ईश्वर की कृपा से होता आप गाँव की पूजारिन– आज मेरे मंदिर की पूजारिन हो गयी– यह सब ईश्वर की माया है। मैं आप से यही निवेदन करता हूँ कि जो मंदिर के भगवान आप की मनोकामना पूर्ण की उसे छोड़कर मत जाना .....।

तुम सबरी की तरह एक साधिका निकली। तुम्हारा समर्पण, त्याग, लक्ष्य को दरवाजे पर ला खड़ा कर दिया .....।

समीक्षा

आमार सोनार बांग्ला

दयानन्द जायसवाल
भागलपुर
मो0–9931240303

बांग्ला हिन्दी के पड़ौस की भाषा है। दोनों में वैषम्य की अपेक्षा साम्य अधिक है। भारतवर्ष का समूचा साहित्य एक ही विशाल संस्कृति से प्रेरणा ग्रहण करता है। ऐसी स्थिति में हिन्दी के साहित्यकार बांग्ला से प्रभावित न हों, यह सम्भव ही नहीं।

किसी भी प्रदेश या देश की मातृभाषा ही वहाँ की भाषा होती है। पश्चिम बंगाल की मातृभाषा बांग्ला ही इस प्रदेश की भाषा है। बांग्ला भाषी समाज में एक जबरदस्त जातीय भावना है–'अमार सोनार बांग्ला।' बंगाल के एक करोड़ बांग्लाभाषी अपने सांस्कृतिक मानचित्र में अपनी पहचान की अक्षुण्णता के लिए अपनी भाषा संस्कृति को जगाये रखना चाहती है।

इतिहास में प्रेम और देश के लिए शीश चढ़ाने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। लेकिन भाषा–प्रेम के लिए जान देना एक विरल घटना है। यह घटना बंगला भाषा के मान की रक्षा के लिए ढ़ाका में 21 फरवरी 1952 को हुई थी। उस रोज चार लोग भाषा–शहीद हुए थे। उसके बाद विश्वभर में मातृभाषा प्रेमी, खासकर बांग्लाभाषी उस दिवस को भाषा–शहीद दिवस के रुप में मनाकर भाषा–शहीदों का स्मरण करते हैं। शहादत स्थल पर जमा लोगों ने रातों–रात एक शहीद मीनार बनाई। वह स्थान मातृभाषा प्रेमियों के लिए तीर्थ स्थान बन गया। साथ ही बांग्लाभाषियों के हर जीवन संग्राम की प्रेरणा का प्रतीक और श्रोत भी।

कलकत्ता ढ़ाका बस यात्रा शुरु हो गई। सारे बांग्लाभाषी खुश हुए और बोले–'एपार बांग्ला ओपार बांग्ला।' बांग्ला के कवि–कथाकार सुनील गांगोपाध्याय का नाम प्रथम बस यात्रियों की तालिका से किसी राजनैतिक हस्तक्षेप के कारण कट जाने से कोलकता के बांग्ला अकादमी के प्रांगण में चेतना समिति ने एक सभा भी की। बांग्ला देश के बांग्ला साहित्यकार शमसुर रहमान, हारुण खाँ आदि ने भी दु:ख प्रकट किया था।

बांग्लादेश की बहुचर्चित लेखिका तसलीमा नसरीन कोलकाता आकर बहुत खुशी का अनुभव कीं। यहाँ उन्हौंने अनेकों कविताएँ एवं पुस्तकें लिखीं– 'आमार ई किछू नेई', 'समस्त जीवन जूड़े–धू–धू एक पर वास छाड़ा' तथा पुस्तकों में एक आत्मकथा भी लिखीं ''आमी भालो नेई, तुमी भालो मेको प्रिय देश।'' इस खंड में वे अपने निर्वासित जीवन के बारे में लिखीं। इसके प्रथम खंड 'आमार मेये बेला' के लिए बांग्ला का सर्वाधिक प्रतिष्ठित आनन्द पुरस्कार से इन्हें सम्मानित भी किया गया। ढ़ाका विश्वविद्यालय के बांग्ला विभाग के अध्यक्ष हुमायूँ बांग्ला कविता, कहानी, उपन्यास और गद्य विधाओं के सिद्धहस्त लेखक थे। कोलकत्ता में जन्मी मारवाड़ी परिवार के नारी–अस्तित्व वादी चिन्तक डॉ0 प्रभा खेतान 'महापंडित राहुल सांकृत्यायन' पुरस्कार प्राप्त बांग्लाभाषी ही थीं। रामकुमार मुखोपाध्याय के उपन्यास 'भांगा नीड़ेर डाना', उत्पलदत्त के नाटक 'घूम नेई' (नींद न आए) तथा 'प्रेमचान्देर सचित्र जीवनी' का संपादन नवारुण भट्टाचार्य प्रसिद्ध बांग्लाभाषी ही हैं। खासकर बांग्ला साहित्यिक, सांस्कृतिक धरातल पर अभिनय, संगीत और साहित्य का गहरा संस्कार बांग्लाभाषी को विरासत में मिला है। मनीष घटक बांग्ला के प्रतिष्ठित साहित्यकार थे, विजन भट्टाचार्य बांग्ला के प्रसिद्ध अभिनेता, नवारुण भट्टाचार्य बांग्ला के प्रसिद्ध कवि–कथाकार हैं। कविता की नयी जमीन बनाने में सुभाष मुखोपाध्याय, नीरेन्द्रनाथ चक्रवर्त्ती, शंखघोष, जयदेव वसु तथा मल्लिका सेनगुप्त आदि के योगदान को विसराया नहीं जा सकता। बांग्ला के युवा कवियों का युगबोध और उत्तरोत्तर आधुनिकता बोध भी हमारा ध्यान कम आकर्षित नहीं करता है।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम चरण से आजतक रवीन्द्रनाथ कविता साहित्य में संसार के सर्वश्रेष्ठ महाकवि बंगभाषा के प्राण कहे गये हैं। जिन्हौंने सात वर्ष की अवस्था से ही रचना आरम्भ की। बंगाल के सुप्रसिद्ध कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर बंग साहित्याकाश के सूर्य हैं। बंगाल में ऐसा कोई घर न होगा जिसमें रवीन्द्र के काव्य और निबन्ध, उनके उपन्यास और नाटक, उनकी आख्यायिकाएँ और गान न पढ़े जोते हों। बांग्ला भाषा के अद्वितीय कवि माने जाते हैं। इन्हें 'गीतांजलि' पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ

था। यह रवीन्द्रनाथ ठाकुर की अमर काव्य–कृति है। इसी के गीतों ने उन्हें 'विश्व कवि' के रुप में प्रतिष्ठित किया। वे किसी एक विचारधारा के कवि नहीं थे, बल्कि उनके काव्य में पूरी मानवता का समावेश था। कवि होने के साथ–साथ कथाकार, उपन्यासकार, नाटककार, निबन्धकार और चित्रकार भी थे। महत्मागाँधी ने उनकी प्रतिमा से अभिभूत होकर उन्हें 'गुरुदेव' की संज्ञा दी थी। ये विश्व का पहला व्यक्ति हैं, जिसके लिखे गीत दो अलग राष्ट्रों के राष्ट्रगान बने। भारत का राष्ट्रगार–'जन–गण–मन अधिनायक' बना तो बांगला देश का 'आमार सोनार बांग्ला।''

मातृभूमि के आराधक, स्वदेश प्रेम से परिपूर्ण हृदय, बंग साहित्य के उपासक 'गुरुदेव' साहित्य सेवियों के लिए कोलकता के पास बोलपुर में शांति निकेतन की स्थापना भी की। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की काव्य शिराओं में प्रीति की रसधार प्रवाहित होती है। इनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति का गौरव उपनिषदीय सूत्रों का वैभव दीख पड़ता है। इनके गीतों में जीवन का अमर संदेश है, प्रेरणा है और ऐसी पूर्णता है जो हृदय के सब अभावों को दूर करने में सक्षम है। इनके दर्शन में भारतीय संस्कृति के विविध अंगो का समावेश है।

गुरुदेव ने शक्ति को मानवता में प्रतिष्ठित किया। भारतीय साहित्य के लिए निःसन्देह यह बात बहुत महत्वपूर्ण मोड़ था। साहित्य की निष्ठा को मानो आँखें मिल गई। हमें नये युग का मन्त्र मिल गया। गुरुदेव के उपन्यास 'गोरा' को प्रतीक रुप में मान लीजिए, कैसी अद्‌भूत समस्या हमारे सामने आती है कि एक अंग्रेज का बालक, जिसके माता–पिता 1858 के गदर में मारे गये और जो एक बंगाली कर्ल्क और उसकी पत्नी द्वारा पाला गया वह बच्चा अंग्रेज से भारतीय हो गया। गौर मोहन ने निष्ठागत आस्तिक हिन्दू घर के संस्कार पाये। छूत–छात, ऊँच–नीच, पूजा–अर्चना की निष्ठा उसमें ऐसी समाई की गौर मोहन को पाने वाले हिन्दूबाबू घबरा उठे। पुरानी धार्मिक मान्यता के अनुसार वे यह समझते थे कि किसी भी म्लेच्छ को धार्मिक कर्म कांड करने का अधिकार नहीं। परन्तु बेचारे गौर मोहन को तो यह मालूम नहीं था कि वह जन्म से अंग्रेज होने के कारण म्लेच्छ है। वह अपने को ब्राह्मण संतान मानकर ही धर्म–कर्मनिष्ठ बन रहा था। गौर मोहन को पानेवाले ब्राह्मण बाबू को यह रहस्य बतलाये हुए बड़ा विचित्र लगता था कि एक अंग्रेज की संतान को उन्होंने इतने दिनों छिपाकर रखा। केवल वे और उनकी पत्नी ही इस रहस्य को जानती थी। गुरुदेव ने गौर मोहन का लालन–पालन करने वाली हिन्दू माता के चरित्र द्वारा बड़े ही प्रभावोत्पादक ढंग से मानव हृदय के विकास को चित्रित किया है। उस माता में उन्होंने रुँड–मुंड खप्पर धारण करने वाली जगदम्बा काली का प्रतिरुप बना दिया। हमारे सामने जगत जननी का नया रुप–मानवीय रुप आया। हमने उसके द्वारा मानवता की शक्ति को पहचाना। उन्होंने कुलीनता की झूठी शान, जमीन्दार ब्राह्मणों का खोखला बड़प्पन तोड़ दिया। संस्कृति का नाता व्यापक रुप में मानवता से जोड़कर विश्व संस्कृति के रुप में प्रतिष्ठित किया।

बंगाल के साहित्यिक उत्थान का मूल कारण निराला की दृष्टि में, वहाँ के समाज सुधारकों और साहित्यकारों पर वेदान्त का प्रभाव था। बंगालियों ने ज्ञान को ही अपने साहित्यिक उत्थान का मूल माना।'' रवीन्द्रनाथ ठाकुर से पहले भी कवियों ने सत्य को ही साहित्य के मूल सूत्र की तरह पकड़ा। बंगाल में राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना की; बंगाल में स्त्रियों को स्वाधीनता में सांस लेने का अवसर मिला। ब्रह्म समाज को स्त्रियों की स्वतंत्रता का सबसे अधिक श्रेय है। रवीन्द्रनाथ का तो कहना ही क्या? आधुनिक युग में रवीन्द्रनाथ की साधना सर्वोपरि है। ब्रह्म शब्द की विस्तृति की तरह उनका काव्य और उनकी कला देश और काल की परिधि को ही पार कर गई। भावना के भीतर से वह अनेकानेक चित्रणों को विराट सत्य में पर्यवसित करने लगे। निराला ने रवीन्द्रनाथ के लिए लिखा था, ''हमारे चित्त में उनके लिए बड़ा आदर है। उन्होंने संसार भर में भारत का मुख उज्जवल किया है, इसमें संदेह नहीं। स्वामी माधवानंद जी जैसे बंगाली विद्वान प्राचीन बांगला के मुकाबले प्राचीन हिन्दी को ही अधिक महत्त्व देते हैं। पर, उन्होंने यह भी टिप्पणी की ''यह स्वीकार करने में हमें कोई आपत्ति नहीं है कि आधुनिक बांगला–साहित्य हिन्दी–साहित्य से ऊँचा है।'' बंगला में माइकेल मधुसूदन दत्त ने अमित्र छंद, गिरिशचन्द्र घोष ने स्वच्छन्द छन्द का प्रचलन भी किया।

बांग्ला कविता–साहित्य की यात्रा दसवीं शताब्दी से शुरु होकर आदि मध्य और आधुनिक काल होते हुए आज यहाँ तक पहुँची है। कला की संवेदना से कविता को ढ़क देना बांग्ला कवियों का बड़ा गुण है। आज के बांग्ला कवि जीवन, समाज और स्वयं सृजन की विसंगति पर भी नजर रखे हुए हैं। उनके पास कठिन जीवन का अनुभव है, बौद्धिकता है, जीवन–जगत को बदलने की बेचैनी है, समय की व्यथा को व्यक्त करने का नया रुप है तथा शिल्प और भाषा को व्यक्त करने की आकुलता भी। लेखकों की रचनात्मक निरंतरता की खास वजह यह है कि उनके पाठकों की पठनवृत्ति में भी निरंतरता है, जागरुकता है तथा संस्कृति–बौद्धिकता के प्रति असंदिग्धता भी है।

समीक्षा

रामविलास शर्मा का सौन्दर्य दर्शन

डॉ0 आनन्द कुमार
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
बन्दा (उ0प्र0)

सौन्दर्यशास्त्र के अध्येताओं (भारतीय तथा पाश्चात्य भाववादी–आत्मवादी दार्शनिकों) ने भी सौन्दर्यशास्त्र को दर्शन का अंग विशेष स्वीकार किया और ज्ञान को कर्म से अलगकर देखने के अपने आग्रह को सौन्दर्यशास्त्र पर भी आरोपित कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि सौन्दर्यशास्त्र भी निष्क्रिय ज्ञान की वस्तु बन गया। सुन्दर वस्तुओं की रचना अथवा सौन्दर्य की अनुभूति से सौन्दर्यशास्त्र का कोई सम्बन्ध नहीं रह गया। वस्तु से सुन्दरता को अलग कर देखने वाले इन सौन्दर्यवादियों ने सौन्दर्यशास्त्र के क्षेत्र में बहुत गड़बड़ की है। उसे आध्यात्म की अन्धी गलियों में धकेल दिया। वस्तु के वस्तुगत गुणों को दूर हटाकर सौन्दर्य को व्यक्ति की आत्मा का अंग बना दिया गया। यदि आप इनके मत को मानते हैं तो आपको यह भी मानने को बाध्य होना पड़ेगा कि गुलाब के फूल के वस्तुगत तत्व–रंग, सुगन्ध और कोमलता से सुन्दरता का कोई लेना–देना नही है। ये तत्व फूल की सुन्दरता की अभिव्यक्ति के कारण नहीं हैं। सुन्दरता तो व्यक्ति के मन में है जो उसे देख रहा है।

ई.एफ.कैरिट ने अपने ग्रन्थ 'सौन्दर्यशास्त्र की भूमिका' में लिखा है– ''सौन्दर्यशास्त्र सौन्दर्य से प्राप्त आनन्द को बढ़ा नहीं सकता, और सौन्दर्यशास्त्र को इतनी छूट भी नहीं दी जानी चाहिए कि वह हमारे आनन्द को विभिन्न ओर प्रेरित करे, सौन्दर्यशास्त्र का कार्य केवल यह होना चाहिए कि वह उन वस्तुओं को समझने में हमारी मदद करे तथा अन्य सभी दर्शनों की तरह उसका उद्देश्य भी हमारी उत्सुकता को शान्त करना हो।'' सौन्दर्यशास्त्र के उद्देश्य पर की गई कैरिट की इस अवैज्ञानिक और असामाजिक टिप्पणी के प्रति अपनी असहमति प्रकट करते हुए रामविलास ने सौन्दर्यशास्त्र को व्यापक, उदात्त तथा बड़े सामाजिक उद्देश्य से जोड़कर विश्लेषित किया है–''सौन्दर्यशास्त्र का उद्देश्य हमारी सौन्दर्य–चेतना को उत्तरोत्तर विकसित करना, मानव–जीवन और उसके सामाजिक तथा प्राकृतिक परिवेश को और भी सुन्दर बनाना है।''

मार्क्सवादी सौन्दर्यशास्त्र का आधार द्वंद्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद तथा उसके 'ज्ञान का सिद्धान्त' है। इसीलिए रामविलास ज्ञान और कर्म के एकात्म पर बल देते हुए सौन्दर्यशास्त्र को निष्क्रिय ज्ञान की वस्तु मानने वालों का विरोध करते हैं। वस्तुतः सौन्दर्यशास्त्र क्रियाशील जगत का यथार्थ है, जिसमें ज्ञान और कर्म का एकात्म है। इसी एकात्म द्वारा सौन्दर्य की परिणति संभव हो पाती है। इस एकात्म के अभाव तथा सुन्दर कृतियों से बहिष्कृत जिस मानसिक सौन्दर्य और अमूर्त सौन्दर्यशास्त्र की बात ये लोग करते हैं, वह घनघोर, असुन्दर और एकांगी होता है।

रामविलास ने सौन्दर्य की व्याख्या करते हुए प्रकृति, मानव–जीवन तथा ललित कलाओं, साहित्य, संगीत, चित्रकला, स्थापत्य आदि के आनन्ददायक गुणों को सौन्दर्य कहा है। कुछ आनन्दवादी आचार्यो ने आनन्ददायक शब्द को स्थूल अर्थ में ग्रहण करते हुए इस स्थापाना पर यह आरोप लगाया कि ''कला में कुरूप और असुन्दरता को भी स्थान मिलता है दुखान्त नाटक देखकर हमें वास्तव में दुख होता है। साहित्य में वीभत्स का भी चित्रण होता है। उसे सुन्दर कैसे कहा जा सकता है?'' रामविलास ने इस बचकाने से आरोप का बड़ा ही सीधा और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करके कहा है–''कला में कुरूप और असुन्दर विवादी स्वरों के समान हैं, जो राग के रूप को निखारते हैं। वीभत्स का चित्रण देखकर हम उससे प्रेम नहीं करने लगते हैं। हम उस कला से प्रेम करते हैं जो वीभत्स से घृणा करना सिखाती है। जिसे हम कुरूप, असुन्दर और वीभत्स कहते हैं, कला में उसकी परिणति सौन्दर्य में होती है।'' रामविलास ने कला के कुरूप, असुन्दर और वीभत्स भेदों की गम्भीर व्याख्या करके उक्त स्थापना दी है। रस हमें आनन्द प्रदान करते हैं। रस से उत्पन्न दुखानुभूति भी कालान्तर में सुखानुभूति बन जाती है क्योंकि रस से हमारी करुणा को प्रसार मिलता है, हमारे संस्कार परिष्कृत होते हैं। यही कारण है कि करुण, भयंकर और वीभत्स रस का उद्देश्य भी आनन्द प्रदान करना है। यदि शुद्ध आनन्द ही काव्य का उद्देश्य होता तो काव्यशास्त्र में इन रसों का अस्तित्व ही नहीं होता। फिर भवभूति और शेक्सपीयर के दुखान्त

नाटक इतने प्रशंसित नहीं होते, उन्हें कोई नहीं पढ़ता। जिस प्रकार काव्य में वीभत्स, करूण, असुन्दर आदि रसों की रचना कर हमें इनके उत्तरदायी कारकों से घृणा करने को प्रेरित किया जाता है, ठीक उसी तरह सौन्दर्य भी वीभत्स, कुरूप या असुन्दर की रचना कर हमें इनसे घृणा करना सिखाता है।

रामविलास ने आगे इसी तथ्य को अधिक गम्भीरता से समझाते हुए लिखा है–''दुखान्त नाटकों में हम दूसरे के दुख देखकर द्रवित होते हैं।.....आनन्द को इस व्यापक अर्थ में लें, उसे इन्द्रीयजन्य सुख का पर्याय ही न मान लें तो हमें करुणा और वीभत्स के चित्रण में सौन्दर्य के अभाव की प्रतीति नहीं होगी।'' वास्तव में सौन्दर्यानुभूति लोकजीवन के उस सौन्दर्य की अनुभूति है जिसके भीतर लोकजीवन का व्यापक हित जुड़ा हुआ है। मनुष्य का भावजगत यहाँ इन्द्रियबोध से जुड़ा हुआ है। मनुष्य का यह भावजगत सामाजिक विकास के साथ–साथ परिष्कृत और समृद्ध होता है। भावजगत व्यक्ति की मन की अवस्था है। किन्तु उसका परिष्कृत और समृद्ध रूप सामाजिक विकास और सामाजिक जीवन से ही संभव हुआ है। इसीलिए हम सौन्दर्य की अनुभूति को करुणा और वीभत्स के भीतर पकड़ पाने में भी समर्थ हो जाते हैं। इसके लिए हमें चेतन रहकर सौन्दर्य–बोध के व्यापक क्षेत्र को समझते हुए अपने सौन्दर्यबोध को भी विकसित करना चाहिए।

शुद्ध सौन्दर्यवादी और भाववादी सौन्दर्यशास्त्रियों के लिए सौन्दर्यशास्त्र निष्क्रिय और जड़शास्त्र है। न उसमें परिवर्तन होता है, न विकास। पर मनुष्य जीवन का इतिहास यह बताता है कि मनुष्य की चेतना और व्यवहार की तरह सौन्दर्यशास्त्र भी गतिशील और विकासशील है। इसीलिए सौन्दर्यशास्त्र को कहीं नियमों–उपनियमों में उसी तरह नहीं बांधा जा सकता, जिस तरह गणित व विज्ञान के नियमों को। सौन्दर्यशास्त्र के नियम–कायदे होते हैं। पर ये नियम–कायदे शास्त्र और व्यवस्था की तरह जड़ और स्थिर नहीं होते। इसी पर रामविलास ने सौन्दर्यशास्त्र को गतिशील भी माना है और नियमबद्ध भी माना है। दरअसल सौन्दर्यशास्त्र के विवेचन के आधार रूप में कुछ नियम–कायदे हैं, इन्हीं के आधार पर सौन्दर्यशास्त्र व्यक्ति की उस 'इच्छा' को प्रतिबन्धित करता है जिसके कारण वह लोक में व्याप्त किसी वस्तु को सुन्दर या असुन्दर कहता है। रामविलास ने ऐसे नियमों से इतर जो जड़ नियम हैं, उनको मानने से इन्कार किया है। ऐसे नियमों के लिए वह मार्क्स की स्थापना से भी टकराये हैं। क्योंकि सौन्दर्यशास्त्र के स्पष्ट नियम–कायदे हो ही नहीं सकते। यदि ऐसा होता तो संसार में कुछ चीजें सभी को अच्छी लगतीं, कुछ चीजें सभी को बुरी यानी अच्छी और बुरी के नियम–कायदे स्थिर होते।

सौन्दर्यशास्त्र के क्षेत्र में यह प्रश्न अभी तक पहेली ही बना हुआ है कि एक ही वस्तु दो अलग–अलग व्यक्तियों के लिए अलग–अलग महत्व क्यों रखती है? सौन्दर्य की सत्ता व्यक्ति के मन में मानने वाले आचार्यो के लिए तो यह पहेली वरदान साबित होती है। इस प्रश्न की आड़ में ही ये आचार्य सौन्दर्य को वस्तु की वस्तुगत सत्ता से अलग कर व्यक्ति के मन में होने की बात को प्रमाणित कर देने के षड़यंत्र में सफल हो जाते हैं। पर रामविलास की स्थापनाओं से इनकी यह षड़यंत्र–प्रेरित सफलता संदिग्ध हो जाती है। उनका महत्वपूर्ण मत है–''ऐतिहासिक परिस्थितियों में मनुष्य के कुछ ऐसे संस्कार बन जाते हैं जिससे वह कुछ चीजों को सुन्दर कहता है, कुछ चीजों को बदसूरत कहता है।'' इसी साक्षात्कार में आगे वे एक और महत्वपूर्ण बात कहते हैं–..... ''यह हमकों अच्छा लगता है। मेरी समझ में किसी ने अभी इसकी व्याख्या नहीं की।'' इस पहेली के अनसुलझे होने की बात कहने के बाद भी रामविलास के सौन्दर्य विमर्श ('आस्था और सौन्दर्य' से चलकर 'भारतीय सौन्दर्यबोध और तुलसीदास) तक में इस पहेली का न केवल उत्तर मिलता है, वरन् इसका वैकल्पिक विश्लेषण भी होता है। इसके लिए वे वस्तु की 'वस्तुगत–सत्ता' और व्यक्ति के 'संस्कार या व्यवहार' को महत्वपूर्ण मानते हैं। व्यक्ति के संस्कार भी लोक की तरह स्थायी और जड़ नहीं हैं। वह गतिशील और विकासमान हैं, जो ऐतिहासिक परिस्थितियों में सामाजिक संघर्ष के दौरान नये आयाम पाते हैं। इनसे विकसित सौन्दर्यबोध और सौन्दर्यानुभूति भी गतिशील और विकसनशील होती है। इसलिए मनुष्य की सौन्दर्यानुभूति और सौन्दर्यबोध में समानता के साथ–साथ भिन्नता भी होती है। सापेक्ष रूप में स्थायी होने के साथ परिष्कृत और विकसित भी होती है। ऐसी अवस्था में व्यक्ति की इच्छा–अनिच्छा ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं रह जाती और सौन्दर्य वस्तु के 'वस्तुगत' गुणों तथा व्यक्ति के 'व्यवहार' या बोध पर निर्भर हो जाता है।

समीक्षात्मक विवेचन

सार्वदेशीय मानवीय-मूल्यों का पतनः संक्षिप्त विश्लेषण

डॉ० अचल भारती
बाँका
मो0-7277448091

मानवीय- मूल्यों का पतन के गर्त्त में चला जाना और उनके बार-बार के ह्रास से समाज व राष्ट्र के समक्ष संकट उपस्थित हो जाना, एक चुनौती भरा ज्वलंत प्रश्न ही तो है। आखिर प्रेम संवेदना, नैतिक मूल्य एवं चैतन्य रागात्मक संबंध कैसे पिछे छूट जाते है कि मनुष्य मानवेतर श्रेणी में पहुँच पाश्विकता का वीभत्स आचरण गढ़ लेता हैं। प्रश्न यही तो है कि आखिर मनुष्य आचरण, कर्मनिष्ठा व संवेदना से दरिद्र होकर कैसे दरिंदा हो जाता है? यह प्रश्न सिर्फ ज्ञानियों, बुद्धिजीवियों को सोचने के लिए ही विवश नही करता अपितु उनके चिंतनशील प्राणी होने पर भी शक करता है, उनकी ईमानदारी पर प्रश्न-चिन्ह लगता है। इसका उत्तर ढूँढते हुए हम उपभोक्तावाद को कटघरे में खड़ा करें या विज्ञापन ,दूरदृश्य संचार संस्कृति की नग्नता, अश्लीलता को विकृतियों का एक मात्र कारण मानें या फिर पश्चात्य सभ्यता, संस्कृति को उन कारकों का उत्स समझें, सारी विवेचनाएँ दूराग्रहपूर्ण एवं सतही लगती है। कारण किसी एक पर कुछ भी नहीं थोपा जा सकता। संभवतः कारण हमारी संस्कृति की विकृतियों एवं पाचन-शक्ति की कमजोरियों में छुपा हो। यह सच है कि वर्त्तमान का बनता परिवेश मानव समाज को अवश्य ही किसी न किसी रूप में प्रभावित करता है। लेकिन विचारणीय विषय तो यह है कि मानव समाज की सारी वर्जनाएँ आखिर बाँध तोड़कर कैसे बाढ़ का आकार ग्रहण कर लेती है? घटनाएँ अंजाम दे जाती है तब कहीं जाकर सभी हायतोवा मचाते है और अपनी चिंता से समाजसेवी होने या श्रेष्ठ मानव होने का प्रमाण देते है, साथ-साथ मूल कारक तत्वों को अपने से ओझल कर देते हैं। जाने-अन्जाने मूल्यहीन अनैतिक कारणों में राष्ट्र या मानव समाज को वेवजह स्थापित करना, उनकी झूठी प्रसंशा करना भी एक बहुत बड़ा अपराध है, समाज-द्रोह को बढ़ावा देने जैसा है।

आज बहुत देर से यह प्रश्न पूछा जा रहा है कि परिवार, स्कूल, संस्था एवं समाज से संस्कार क्यों खतम हो रहे? समाज का खुलापन कहाँ तक जायज है? इतना तो सभी जानते है कि खुलापन का संबंध मूल्यगत स्वतंत्रता से है। जबकि संस्कार का संबंध मुल्यगत चेतना से। इसके आगे इनकी सीमाएँ क्या है? - शायद बार-बार इस पर ही सवाल दागे जा रहे हैं। इसके उत्तर में हम थोड़ा तत्कालीन परिस्थियों पर प्रकाश डालें। कहना चाहिए उपभोक्तावाद अपनी चरम सीमा पर भोगवादी संस्कृति में डूबो अहंमूलक संस्कार की सर्जना में लगा है। दूसरा पहलू यह है कि आज सम्पन्नता की विडम्बना में उनके चारों ओर चक्कर लगाती नजर आ रही है। अर्थात् उनकी सारी लालसाएँ, आकाँक्षाएँ उनके जीवन-मूल्यों के केन्द्र में आधिपत्य जमा चुकी है। यहाँ अर्थ की प्राप्ति में अपराध एक अचूक हथियार बनकर रह गया है। प्रेम, चेतना, संवेदना एवं मानवीय-संबंधों आदि कारणों के निमित्त परिवार एवं राष्ट्र में - झूठ, छल, कपट,धूर्त्तता, चापलूसी, धोखाधरी, ईष्या, द्वेष, घृणा एवं बदले की भावना जैसी विकारों ने जगह ले ली है। वहरहाल मनुष्य अपनी लालसाओं, आकाक्षाओं में मानव प्रकृति से दूर स्वयं की सुखभोग लालसा में कठोर प्रवृति को पुख्ता करने में लगी है। कुल मिलाकर परिवार एवं समाज के मुखिया अर्थ-हवस की कसौटी पर ही साधे जा रहे या फिर समाज अथवा राष्ट्र का बड़ा से बड़ा शक्तिमान या राविणहुड अपराधियों में ही ढूँढे जा रहे। यहाँ तक की मानव एवं समाज निर्माण की भूमिका के प्रवल दावेदार धर्मावलंवियों ने भी पूरे राष्ट्र एवं समाज को व्यवसाय की मंडी में वब्दील कर रखा है। उनके सारे दरवाजे खुले ही रहते हैं और उन दरवाजों से सारा निवारण होता ही रहता है। यहाँ मनुष्य खुद को टटोलने की वजाय निर्भय होकर आस्थावादी स्थापनाओं में गौरवान्वित महसूस होते हैं, वास्तविक मान- मूल्य बहुत पीछे रह जाता है। ऐसे में अनुशासनहीनता, उदंडता, मूल्यहीनता, विश्रृंखलता जैसे ऋणात्मक पहलूओं का रोजमर्रे के परिवेश में स्थाप्य कायम हो जाना स्वाभाविक ही है।

कहना चाहिए अब गलत और सही की व्याख्या केवल विचार जगत का विषय बनकर रह गया है और व्यवहार जगत में वह आडंवर, दूराग्रह एवं अहंकार से लैश हो गया है। सच तो यह है कि हम व्यक्ति, परिवार एवं समाज का निर्माण कर सकते हैं। इधर स्थिति यह है कि व्यक्ति, परिवार, पाठशाला एवं समाज अब पूर्ववत स्थिति में नहीं है। संस्कार और संस्कृति जैसे शब्द यहाँ पच नहीं पा

रहे। वो बोलचाल या नारों तक ही सीमित रह गये हैं। यहाँ आकर नि:संकोच कहना होगा परिवार, पाठशाला एवं समाज की पाचन शक्ति कमजोर हुई है और उनपर पूरी तरह राजनीतिक रंग चढ़ा हुआ है। फलत: उपभोक्तावाद एवं पाश्चात्य सभ्यता, संस्कृति का हमला भी तेज हुआ है। ऐसे में उपभोक्तावाद या पाश्चात्य सभ्यता, संस्कृति से उत्पन्न अश्लीलता को ही सिर्फ कारक तत्व मानकर निश्चित हो जाए, न्यायसंगत नहीं लगता। कारण स्पष्ट है आज व्यक्ति, परिवार, समाज सस्वार्थपरक अवस्था में सबकुछ (जायज, नाजायज) ग्रहण करता है और श्रम, संबंध, संवेदना, सोच, विचार आदि मूल्यवान शब्द–शक्तियों से अपनी अपनी आकांक्षओं एवं लालसाओं के वशीभूत आकार ग्रहण करता हुआ मानव अवमूल्यन के विकेन्द्रीकरण में जीता है। पाचन शक्ति के कमजोर हो जाने पर ही हम समान्य अवस्था कायम नहीं कर पाते। आत्मबल के धनी व्यक्ति ही परिवार एवं समाज के मानवीय मूल्यों को स्थापित कर पानें में सक्षम हैं। चेतना मनुष्य की पहचान है। अपनी चेतना परिधि में रहकार ही मनुष्य खुलेपन की सीमा को भी जान–समझ लेता है और वही समझ उसका महत्तम संस्कार बन जाता है।

क्षणिकाएं

ज़िन्दगी !

डा0 मञ्जरी पाण्डेय
सारनाथ, वाराणसी
मो0 : 9973544350

क्लबों होटलों में
दारु की बोतलों में
थिरक रही है ज़िन्दगी !

ढाबे औ रेडियो पे
झुग्गी–झोपड़ियों में
चल रही है ज़िन्दगी!

कोठे औ कोठियों में
मठ धर्मशालाओं में
पल रही ज़िन्दगी!

अखबार औ मीडिया में
गूगल की दुनिया में
बिखर रही है ज़िन्दगी!

मन्दिरो मस्ज़िदों में
चर्च–गुरुद्वारों में
सिहर रही है ज़िन्दगी!

रिश्ते औ नातों में
घर के खातों में
बिक रही है ज़िन्दगी!

संसद के गलियारों में
सिंक रही है ज़िन्दगी!

घर औ गृहस्थी में
टीन–एजर्स बच्चों में
सुलग रही है ज़िन्दगी!

यहाँ से वहाँ तक
ज़मीं से आसमां तक
सिसक रही है ज़िन्दगी!

ठौर की तलाश में
हाल से बदहवास में
फफक रही है ज़िन्दगी!

सपनों के साखों पे
बोझिल आंखों में
पसर रही है ज़िन्दगी!

समीक्षा

कवि रहीम : एक सामाजिक चिंतक

डॉ. सुनील कुमार परीट
बैलहोंगल, बेलगाम, कर्नाटक
मो– 09480006858

''बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय।
जो दिल खोजा आपना, मुझसा बुरा न कोय।।''

'समाज' व्यक्तियों का मिला–जुला रूप है, न्याय–अन्याय, धर्म–अधर्म, सुख–दुख का मेल इस समाज में हम देख सकते हैं। यह सामाजिक व्यवस्था आजकल की नहीं है बल्कि प्राचीन काल से ही चली आ रही है, और किसी राष्ट्र का साहित्य उसी समसामयिक सामाजिक व्यवस्था पर आधारित होता है। क्योंकि खरा साहित्य तो अनुभूति के आधार पर ही उभरता है और मनुष्य को सभी तरह के अनुभव इस समाज से प्राप्त है। बतौर कुछ अनुभव घर–परिवार, मंदिर–मस्जिद, प्राणी–जीवजंतुओं से प्राप्त करता है पर ये सभी वो समाज के एक अंग ही हैं ना? समाज के बगैर मनुष्य जीने की कल्पना भी नहीं कर सकता। अच्छे एवं कड़वे अनुभव तो समाज में होते ही रहते हैं। क्योंकि समाज में सभी लोग अच्छे ही होते है या घटनेवाली घटनाएँ सभी अच्छी ही होती है यह कहना बहुत ही मुश्किल बन पड़ता है। सो इन व्यवस्था के बारे में रहीम जी का कहना है–

''दोनों रहिमन एक से, जों लों बोलत नाहिं।
जान परत हैं काक पिक, रितु बसंत के माहिं।।''

अर्थात कौआ और कोयल रंग में एक समान होते हैं। जब तक ये बोलते नहीं तब तक इनकी पहचान नहीं हो पाती। लेकिन जब वसंत ऋतु आती है तो कोयल की मधुर आवाज से दोनों का अंतर स्पष्ट हो जाता है।

'समाज' चाहे किसी भी राष्ट्र का हो वहाँ धर्म के, हर जाति के लोग रहते हैं, हिन्दु हो या मुसलमान सभी के लिए समाज तो एक समान ही होता हैं और यही सामाजिक व्यवस्था साहित्यकारों के साहित्य को प्रभावित करती है। इसलिए हम भारतीय समाज को भी सहज ही यहाँ के मुसलमान साहित्यकारों के साहित्य में देख सकते हैं। कवि रहीम जी को हम पढ़ते जायेंगे तो जान पायेंगे कि उनके साहित्य पर और जीवन पर भारतीय समाज का गहरा असर है। रही मध्यकालीन भारत के कुशल राजनीतिवेत्ता , वीर–बहादुर योद्धा और भारतीय सांस्कृतिक समन्वय का आदर्श प्रस्तुत करने वाले मर्मी कवि माने जाते हैं। रहीम जी जीवन भर हिंदू जीवन को भारतीय जीवन का यथार्थ मानते रहे। रहीम जी ने अपने काव्य में रामायण, महाभारत, पुराण तथा गीता जैसे ग्रंथों के कथानाकों को उदाहरण के लिए चुना है और लौकिक जीवन व्यवहार पक्ष को उसके द्वारा समझाने का प्रयत्न किया है, जो सामाजिक सौहार्द एवं भारतीय संस्कृति को प्रकाशित करता है। कवि रहीम जी का पूरा नाम अब्दुर्रहीम खानखाना था, इनका जन्म संवत् 1613 ई.(सन् 1553) में इतिहास प्रसिद्ध बैरम खाँ (रहीम के पिता) के घर लाहौर में हुआ था। जब वे चार साल के थे उनके पिता हज यात्रा के दौरान मारे गये। तब अकबर ने रहीम को और उनकी माता को आगरा बुलवाकर उनकी देखभाल की। कुशाग्रबुद्धि और प्रतिभा संपन्न बालक रहीम ने शीघ्र ही, फारसी, अरबी, तुर्की, संस्कृत और हिन्दी भाषा साहित्य का अध्ययन कर लिया तथा उनकी विद्वता से प्रभावित होकर अकबर ने उन्हें मिर्जाखाँ की उपाधि से सम्मानित किया। श्रेष्ठतम शिक्षा–दीक्षा के कारण रहीम का काव्य आज भी हिंदूओं के गले का कण्ठहार बना हुआ है। दिनकर जी के कथानानुसार अकबर नें अपने दीन–ए–इलाही में हिंदूत्व को जो स्थान दिया होगा, उससे कई गुणा ज्यादा स्थान रहीम ने अपने कविताओं में दिया। रहीम के बारें में यह कहा जाता है कि वह धर्म से मुसलमान और संस्कृति से शुद्ध भारतीय थे। इसीलिए अकबरी दरबार के नवरत्नों में भी इनकी गणना होती थी।

सहकारिता और सहृदयता भारतीय समाज की बुनियाद है और ऐसे गुण हम रहीम में पाते हैं। रहीम का स्वभाव अत्यंत कोमल व उदार था तथा उनमें गर्व का लेश मात्र भी न था। यह तो उनके हर दोहों से स्पष्ट होता है–

''धनि रहीम जल पंक कहं लघु जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन है, जगत पियासो जाय।।''

समाज में अनेक बड़े–बड़े अमीर लोग रहते हैं, गरीबों की अभावग्रस्त लोंगों की सहायता न की तो वे किस काम के। रहीम जी आगे कहते हैं–

''बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर ।।''

रहीम के यहाँ हमेशा विद्वानों और पंडितों की भरमार सी रहती थी तथा वह अत्यंत दानी, परोपकारी और सहृदयी पुरूष थे।

वह मुसलमान होते हुए भी कृष्ण–भक्त थे और इसलिए हिन्दी काव्य के प्रति उन्हें आकर्षण भी था तथा उनकी कृतियाँ में कृष्ण के प्रति अत्यंत प्रेम की झलक भी दृष्टिगोचर होता है।हिन्दी साहित्य में भक्ति काल के कृष्ण भक्तों में रहीम भी माने जाते हैं।
उदाहरण–

''जो बड़ेन को लघु नहीं रहीम घटी जाहिं।
गिरधर मुरलीधर कहें, कछु दुःख मानत नाहिं।।''

यानी रहीम कहते हैं कि बड़े को छोटा कहने से बड़े का बड़प्पन नहीं घटता, क्योंकि गिरिधर(कृष्ण) को मुरलीधर कहने से उनकी महिमा में कमी नहीं होती.। अकबर के यहाँ रहते हुए भी रहीम को महाराणा प्रताप पर अटुट श्रध्दा थी। कहते हैं एक बार गोस्वामी तुलसीदास जी ने एक ब्रह्मण को जिसे अपनी पुत्री के विवाह हेतु धन की आवश्यकता थी, तो दोहे की यह पंक्ति लिखकर रहीम के पास भेज दिया–

''सुरतिय, नरतिय, नगतिय, सब चाहत अस होय।''

रहीम ने उस ब्राह्मण का अत्यंत आदर–सत्कार किया और उसे बहुत ही धन देकर उक्त दोहे की पूर्ति इस प्रकार कर तुलसीदास के पास वापिस भेज दिया:–

''गोद लिए हुलसी फिरै, तुलसी सो सुत होय।''

एक बात स्पष्ट है कि जो सुख समाज में मिल–जुलकर रहने से मिलता है, वैसा सुख अन्य कहीं भी नहीं मिलता।इसी बात को रहीमदास जी ने भी स्पष्ट किया है–

''बिगरी बात बने नहीं, लाख करो किन कोय।
रहिमन फाटे दूध को, मथे न माखन होय।।''

मनुष्य को इस समाज में सोचसमझ कर व्यवहार करना चाहिए, क्योंकि किसी कारणवश यदि बात बिगड़ जाती है तो फिर उसे बनाना कठिन होता है, जैसे यदि एकबार दूध फट गया तो लाख कोशिश करने पर भी उसे मथ कर मक्खन नहीं निकाला जा सकेगा.

रहीम काव्य–रचना के साथ–साथ वह विद्मानों और कवियों का ऐसा सम्मान करते थे कि उनसे बढ़कर कदाचित् ही किसी ने किया हो। गंग, मंडन, लक्ष्मी नारायण और बाण आदि अनेक कवि रहीम पर आश्रित थे।रहीम की श्रेष्ठ काव्यकृतियाँ कुछ इस प्रकार हैं–

1. दोहावली, 2. नगर–शोभा, 3. बरवै नायिका–भेद, 4. बरवै, 5.मदनाष्टक, 6.शृंगार सोरठा, 7.रहीम काव्य, 8.खेट कैटकम, 9.राम पंचाध्यायी, आदि।रहीम ने अवधी और ब्रजभाषा दोनों में ही कविताओं की रचना की है। रहीम की रचनाओं में लोक–व्यवाहर, नीति, भक्ति,शृंगार का मार्मिक चित्रण मिलता है। रहीम के दोहे जीवन रस से ओतप्रोत हैं।इसलिए रहीम जी कहते हैं खर्च भी मनुष्य को सोच समझकर करना चाहिए, मनुष्य अपनी संपत्ति का अपव्यय करता रहता है और एक दिन ऐसा आ जाता है जब उसके पास कुछ भी शेष नहीं रह जाता।इसके साथ ही समाज में उसकी प्रतिष्ठा खत्म हो जाती है।

''संपति भरम गंवाइ के, हाथ रहत कछु नाहिं।
ज्यों रहीम ससि रहत है, दिवस अकासहिं मांहि।।''

मानना है कि रहीम का अंतिम काल सोचनीय था, उन्होने अपनी दीनावस्था में भी किसी की दीनता को स्वीकार नहीं किया। संवत1683 वि.(सन.1686) में उनकी दिल्ली में मृत्यु हो गयी। रहीम सेनापति, प्रशासक, आश्रयदाता, दानवीर, कूटनीतिज्ञ, बहुभाषाविद, कलाप्रेमी, कवि एवं विद्वान थे। रहीम सांप्रदायिक सदभाव तथा सभी संप्रदायों के प्रति समादर भाव के सत्यनिष्ट साधक थे।वे भारतीय समाज एवं संस्कृति के आराधक थे।रहीम कलम और तलवार के धनी थे और मानव प्रेम के सूत्रधार थे।

आलेख

आवरण

अरुण कुमार सिंह
भागलपुर

अन्य पुष्पों की अपेक्षा कमल जिसका एक नाम 'पंकज' भी है, कीचड़–पानी में जन्म लेकर भी कीचड़– पानी से अलिप्त रहता है। अन्य अवांछनीय जलीय पौधों के संग–दोष से भी 'कमल' न्यारा और प्यारा बना रहता है। इसी प्रकार जो लागे मोह, मद, मत्सर इत्यादि से भरे इस संसार में अपने कर्त्तव्यों को निभाते हुए भी इनसे अलिप्त रहते हैं, वे भी कमल के समान ही हैं।

इन्हीं विशेषताओं के कारण बीते काल में जिन्हौंने कमल–सम जीवन जिया है, वे ही आज भारत के मंदिरों में पूजे जाते हैं। उन्हीं के हरेक अंग के नाम के साथ उपमा के रुप में 'कमल' शब्द का प्रयोग होता है–यथा कमल नयन, कमल मुख, कमल कर (हस्त), कमल चरण इत्यादि। हम भी यदि अपने जीवन को कमल–पुष्प समान अलिप्त बनायें तो जीवन सौन्दर्य रस से लबालब हो जायेगा। उच्च आदर्शों का उपमेय बन जायेगा। इस उच्च आदर्शों वाली स्थिति की प्राप्ति के लिए हमें संबंध, धन और प्रतिष्ठा–इन तीनों में पवित्रता और दिव्यता को ही वरण करना श्रेष्ठ जीवन के लिए श्रेयस्कर होगा।

आजादी के कालखण्ड में एक बार महात्मा गाँधी जी उड़ीसा के दौरे पर थे। वहाँ उन्होंने एक महिला को बहुत मैले कपड़े में देखा। बापू ने बा को उस महिला को स्वच्छता का पाठ पढ़ाने भेजा। महिला ने अपनी समस्या बताई कि कपड़े बदलने के लिए दूसरे कपड़े हैं हीं नहीं, स्वच्छता कैसे अपनाई जाए। बापू यह जानकर बहुत दुखी हुए। उन्होंने उस समय प्रण किया जब तक इस देश के हर नागरिक को आवश्यकतानुसार कपड़े नहीं मिल जाते, बापू भी न्यूनतम आवश्यकता पूर्त्ति के लिए कपड़े पहनेंगे और उन्होंने इस प्रण को निभाया।

बापू और बापू के सहयोगियों के देश प्रेम, सादगी, त्याग, सत्य आदि के बल से भारत आजाद हुआ, विकसित भी हुआ। आज देश में हर प्रकार का कपड़ा बनता है और निर्यात भी होता है परंतु अफसोस की बात है कि हर शहर–कस्बे में कपड़े की सरल उपलब्धता होते हुए भी हमारी माताओं, बहनों के कपड़े छोटे होते जा रहे हैं।

इतिहास कहता है, सभ्यता के पहले दौर में मानव वनमानुष था। जंगलों में रहता था, कच्चा मांस खाता था। वृक्षों की छाल से तन ढंकता था। धीरे–धीरे हम सभ्य बने। हथकरधे से कपड़ा बुना जाने लगा और मानव तन ठीक से ढका जाने लगा। वनमानुष संस्कृति को पार कर सभ्य मानव बनने के सफर में अन्य बातों के साथ–साथ शालीन पोशाक की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। आज यदि शालीन पोशाक के मानदण्ड को भुलाकर इस नश्वर तन के प्रदर्शन में मन–बुद्धि को लगा रहे हैं तो यह भी उसी वनमानुष संस्कृति की ओर लौटने का एक कदम ही जान पड़ रहा है।

जानवरों में से कोई कपड़े नहीं पहनता। मानव सर्वश्रेष्ठ प्राणी है तो प्रकृति ने उसे श्रेष्ठतम साधन उपलब्ध कराया ताकि मानव उसका आनन्द ले, पर यदि हम प्राप्त साधनों की उपेक्षा कर, मानवीय मर्यादाओं की रेखा से बाहर निकलते हैं तो पशु संस्कृति की तरफ आकर्षित होते नजर आते हैं।

आज हम देखते हैं कि नारी और पुरुष एक–दूसरे में आसक्त होकर जीवन जी रहे हैं। दैहिक आकर्षण का चुम्बकीय क्षेत्र हर के नजर में, मन में, इस कदर फैल गया है कि वे दोनों सुध–बुध को गँवा रहे हैं, मर्यादा को अलविदा कर रहे हैं। आत्म–संयम के मुख्य गुण शब्द–कोष में सिमटते जा रहे हैं। प्रकृति के ये दो नूर नारी और नर मानसिक संतुलन की स्तर से परे होकर, अपनी दृष्टि और वृत्ति को पवित्र कर अपयश के भागी बन रहे हैं। अपने क्षणिक लुभावने मोह जाल में फंसकर अपनी परेशानी के निमित्त स्वयं ही बनते जा रहे हैं।

इतिहास के किसी दौर में, ठौर में नारी को यवनों की कुदृष्टि के कुठारा घात से बचाने के लिए विवशता वश परदा प्रथा चली। पर आज की परिस्थिति में सभी नारियाँ इस तरह की सभी कुप्रथाओं से मुक्त हैं। आज की नारियाँ खुली हवा में बेफिक्र, लापरवाही से, अलबेलेपन से साँस ले रही हैं। इतने लापरवाह की शालीन पोशाक की सीमा ही पार करने में स्वयं को विकास की सीढ़ी समझने लगी हैं। इवाई सोच का परिणाम उच्छृंखलता का दृश्य फैला रहा है। समाज से आदर्श और संपूर्ण व्यक्तित्व निखार का मानदंड ही लुप्त होता जा रहा है। असंतुलित जीवन–धारा की

पश्चिमी धार में बहने के लिए अपने को विवश क्यों महसूस कर रहे हैं? यह यक्ष प्रश्न आज अनुत्तरित रह गया तो कल महापरिवर्तन अवश्यम्भावी है।

रामायण में तीन नारी पात्र दिखाए गये हैं। शूर्पनखा, भीलनी शबरी और सीता। शूर्पनखा सर्व सामाजिक मर्यादाओं से मुक्त, मनमानी प्रकृति की है। परिवार की तरफ से भी वह बंधनरहित है। मन को भा जाने वाले किसी भी पुरुष के समक्ष अपनी काम से रंगी भावनाएँ नि:संकोच व्यक्त कर देती है। शूर्पनखा का भाई रावण लज्जाविहीन बहन पर अंकुश न लगाकर श्रीराम से ही वैर करता है।

रामायण की दूसरी नारी पात्र है भीलनी शबरी जो राम–नाम रुपी पुष्प पर, मन रुपी भ्रमर के मंडराते हुए पूरा जीवन गुजारती है। पूर्ण आत्मिक एवं शात्विक जीवन जीती है।

तीसरी पात्र हैं सीता जो रुप, ऐश्वर्य, ऊँचा खान–दान सबके होते हुए भी त्याग का साकार रुप हैं। शक्तिसंपन्न होते हुए भी नम्रता की मूर्त्त हैं। सब प्रकार की स्वतंत्रता होते भी शालीनता और मर्यादा का प्रत्यक्ष दर्शन हैं। अब ज्वलंत प्रश्न यह है कि आज की नारियाँ रामायण की इन तीन पात्रों में से किसका अनुसरण करना चाह रही हैं? यदि भीलनी शबरी की तरह जंगल में अकेले रह, भगवान के इन्तजार में जीवन खपा देना वांछनीय नहीं है ता शूर्पनखा की तरह देह का जहाँ–तहाँ प्रदर्शन भी तो वांछनीय नहीं होना चाहिए।

हमारा आदर्श तो सीता है जिसमें भौतिक उपलब्धियों के साथ आध्यात्मिक गुणों का बराबर का समावेश है। यह नारी का संतुलित जीवन। ना तो जबरदस्ती लादी गई साधना और पहनाई गई बेड़ियों की घुटन हो और न ही समाज की शालीनता और मर्यादा की धज्जियाँ उड़ा देने वाली उच्छृंखलता हो।

कोई जानवर अपनी जाति से नहीं डरता, दूसरी जाति वाले से डरता है बिल्ली, बिल्ली से नहीं डरती, कुत्ते से डरती, चूहा, चूहा से नहीं डरता, बिल्ली से डरता है। लेकिन मानव अपनी जाति से डरता है। नर और नारी एक–दूसरे से डरते हैं। इस डर का कारण है 'दैहिक दृष्टि'। जब तक एक–दूसरे को दैहिक नजरों से देखते रहेंगे, यह डर खत्म नहीं होगा। देह दृष्टि अर्थात् स्वयं को देह मानना। वर्तमान समय में देह रुपी कपड़े पर चढ़े कपड़ों का अभियान इतना बढ़ गया है कि सांस्कृतिक धरोहर तार–तार होकर जहाँ–तहाँ रो नहीं बिलख रहा है। क्योंकि विनाश आगे खड़ा है। महाभारत की विभीषिका की यही तो पृष्टभूमि थी। वही फिर दुहरायी जा रही है।

विडंबना यह है कि हम नए कपड़े का दिखावा करना चाहते हैं पर नए विचारों का नहीं। हम रंग–बिरंगे परिधानों में सुख–शान्ति खोजते हैं परन्तु नए–नए ऊँचे, पावन विचारों में नहीं। क्या यह शरीर और मन इन नश्वर पदार्थ के पीछे लटकाने के लिए ही मिला है? कपड़े तन ढकने की आवश्यकता पूर्ति के लिए हैं, उनमें प्रसन्नता खोजने के लिए नहीं। अध्यात्म कहता है, शरीर आवरण है। इसे भूल अपने मूल स्वरुप यानी आत्मिक स्वरुप में अपने को इज्जत, मान और शान प्राप्ति का साधन मत बनाइये। आवरण पर चढ़े आवरण की गिरफ्त में फँसे अपने असली स्वरुप को पहचानिए। आत्म साक्षात्कार और परमात्म साक्षात्कार कीजिए।

सूचना

संभाव्य प्रबन्ध समिति के
कुछैक सदस्यों में बदलाव किया गया है।

संस्थापक

आलेख

प्रगतिशील साहित्यिक आन्दोलन और रामविलास शर्मा

किरण देवी
प्रोफेसर, हिन्दी
अभिनव प्रयाग कॉलेज हमीरपुर
जिला–बंदा (उ0प्र0)

सन् 1940 में रामविलास शर्मा को पी0एच0डी0 की उपाधि मिली, धीरे–धीरे प्रगतिशील लेखक संघ की ओर उनका आकर्षण बढ़ रहा था। सन् 1943 की गर्मियों में बम्बई में प्रगतिशील लेखक संघ का अधिवेशन होने वाला था। रामविलास जी उसमें भाग लेने के लिए गये। इस सम्मेलन का बड़ा दिलचस्प वर्णन उन्होंने किया है। ''इस सम्मेलन की अध्यक्षता राहुल जी करने वाले थे पर उनके किसी कारण से न आने पर डागें ने अध्यक्षता की थी। सम्मेलन में मराठी लेखक मामा बरेरकर के अलावा जोश मलीहाबादी, अली सरदार जाफरी, अमृतलाल नागर आदि लेखक भी थे।'' रामविलास उस समय कम्यूनिष्ट पार्टी के सदस्य नहीं थे। इसी सम्मेलन में उनकी भेंट कम्यूनिष्ट नेताओं से हुई एवं 1943 जाते–जाते वे कम्यूनिष्ट पार्टी के सदस्य बन गये तथा पार्टी में वे प्रतिनिधि व पर्यवेक्षक भी चुने गये।

प्रगतिशील लेखक संघ के बम्बई अधिवेशन से लौटकर रामविलास शर्मा लखनऊ आये। पर, यहाँ लखनऊ से उनकी विदाई की तैयारी हो रही थी। असल में सिद्धान्त साहब को दो बातें अच्छी नहीं लगती थीं– एक तो रामविलास शर्मा का हिन्दी में लिखना और दूसरा उनका वामपंथी झुकाव। रामविलास शर्मा लखनऊ लौटकर आये, सिद्धान्त साहब के घर मिलने गये तो सिद्धान्त साहब ने कहा– ''राजपूत कालेज आगरा मे अंग्रेजी विभाग के अध्यक्ष का पद खाली है। तुम आगरा चले जाओ।''रामविलास जी यूनिवर्सिटी छोड़कर आगरा नहीं जाना चाहते थे, पर विवशता थी।

सन् 1949 से 1953 तक रामविलास शर्मा प्रगतिशील लेखक संघ के महासचिव रहे। यह समय प्रगतिशील लेखक संघ के लिए बृहद झंझावातों से भरा था। डॉ0 रामविलास ने एक लेख में लिखा है–''मैं क्रमशः संयुक्त प्रान्तीय और प्रगतिशील लेखक संघ का मंत्री भी रह चुका हूँ। इसलिए एक हद तक मेरी आलोचनायें उस समय की प्रगतिवादी मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली मानी जा सकती हैं। ''(मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य, पृ0 312) संगठन, लेखन और सामाजिक–राजनीतिक क्षेत्रों में अत्यधिक सक्रिय होने के बावजूद रामविलास अत्यन्त विवादास्पद बने रहे और उन्हें आलोचकों का सर्वाधिक विरोध झेलना पड़ा। उसका मुख्य कारण मेरी समझ में रामविलास की उपर्युक्त धारणा ही है–''मेरी आलोचनायें उस समय की प्रगतिवादी मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली मानी जा सकती है। इस धारणा का सीधा मतलब होता है कि अन्य प्रगतिशील या मार्क्सवादी आलोचकों की मान्यताओं को गलत मानना चाहिये। लेकिन आलोचना के क्षेत्र में, मान्यता के क्षेत्र में क्या यह सम्भव है कि किसी एक व्यक्ति की आलोचना या मान्यताओं को प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार कर लिया जाये?मेरे विचार से यह उचित नहीं है।''(मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य, पृ0 312)

अब सन् 1949 के भिवण्डी सम्मेलन में स्वीकृत घोषणा पत्र पर गौर करें। रामविलास ने 1949 के घोषणा–पत्र के विशय में लिखा है– ''प्रगतिशील साहित्यिक आन्दोलन के समूचे इतिहास को ध्यान में रखते हुए 1949 का घोषणा पत्र तैयार किया गया। निषेधात्मक दृष्टिकोण को त्यागकर प्रगतिशील लेखकों के 1949 के घोषणा पत्र में पहली बार कहा गया था,–''प्रगतिशील लेखक प्राचीन साहित्य एवं संस्कृति के सच्चे उत्तराधिकारी हैं और मानव सभ्यता की सर्वश्रेश्ठ परम्पराओं को आगे ले जाते हैं।''(प्रगतिशील काव्यधारा एवं केदारनाथ अग्रवाल, पृ0 26) इस वाक्य में जो घोषणा है, वह बिल्कुल सही है। लेकिन भिवण्डी सम्मेलन की जो राजनीतिक स्थापना है, वह इससे भिन्न है। इस घोषणा पत्र के आरम्भ में ही कहा गया है, ''आज भारतीय साहित्य के विकास में निर्णायक परिवर्तन हो रहे हैं। पहले की अपेक्षा कहीं ज्यादा तीक्ष्ण रूप में प्रगतिशील और प्रगति विरोधी प्रवृत्तियाँ एक दूसरे के मुकाबले पर खड़ी हैं।''(प्रगतिशील काव्यधारा एवं केदारनाथ अग्रवाल, पृ0 26) इससे इस बात का पता चलता है कि भारतीय जनता की जनतंत्र और समाजवाद की लड़ाई ने एक बड़ा मोड़ लिया है।

भाषा–अस्मिता तथा कम्युनिष्ट पार्टी की कुछ अन्य नीतियों को लेकर खासे विवाद चल रहे थे। रामविलास जी ने जैसा

कि उनका स्वभाव है, इसे जोश, तीक्ष्णता और तार्किकता के साथ अपनी बातें कहीं। वे साफगोई को पसन्द करते हैं। 'किन्तु–परन्तु' वाली भाषा उन्हें पसन्द नहीं है। लिहाजा परिणाम यह हुआ कि वह बहुत सी आलोचनाओं के केन्द्र में आ गये और उनके खिलाफ एक प्रकार का निन्दा–अभिमान ही चल निकला एवं दिल्ली अधिवेशन में प्रगतिशील लेखक संघ के महासचिव पद से हटाते हुए रामविलास शर्मा को मार्क्सवादी पार्टी से भी निकाल दिया गया। इस समय उनकी आलोचना में रामविलास जी खुद मानते हैं कि कट्टरता ज्यादा थी, शायद इसीलिए उनके मित्र अमृतलाल नागर इसे 'मारधाड़ वाली आलोचना' कहते हैं। रामविलास जी के इस तरह के कई लेख पढ़ने के बाद अमृतलाल नागर ने उन्हें सलाह दी थी– ''जो भी कुत्ता तुम्हारी ओर देखकर भौंके, उसे क्या लाठी लेकर मारने दौड़ोंगे, फिर तो जीवन भर यही करते रह जाओंगे। कुछ ठोस काम क्यों नहीं करते'' और उसके बाद सचमुच रामविलास जी की लेखन यात्रा में एक बड़ा बदलाव दिखाई पड़ता है।

'भाषा और समाज' का प्रकाशन 1961 में हुआ, भाषा में समाज सरीखे अत्यन्त गहन विषय पर डॉ0 शर्मा का यह एक महत्वपूर्ण मौलिक ग्रन्थ है। इसमें सामाजिक विकास के सन्दर्भ में भाषा के विकास का अध्ययन करते हुए भाषा शास्त्र एवं समाजशास्त्र की अनेक मान्यताओं का गहन विद्वता के साथ खण्डन–मण्डन किया गया है। सैद्धान्तिक विवेचन के अलावा इसमें भाषा सम्बन्धी अनेक व्यावहारिक समस्याओं का भी विवेचन है। उदाहरण के लिए भारत की राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा की समस्या अहिन्दी भाषी प्रदेशों में असन्तोष के कारण क्या भारत की सभी भाषायें राजभाषा बनेंगी? क्या अंग्रेजी विश्वभाषा है? और क्या उसके बिना हमारा काम नहीं चल सकता?आदि प्रश्नों पर भी प्रकाश डाला गया है। यह पुस्तक न केवल भाषा–विज्ञान का शास्त्रीय अध्ययन करने वालों के लिए बल्कि उन पाठकों के लिए भी उपयोगी हैं जो इन समस्याओं में गहरी दिलचस्पी रखते हैं।

'आस्था एवं सौन्दर्य' रामविलास शर्मा की मूल्यवान आलोचनात्मक कृति है जो भारोपीय साहित्य और समाज की क्रियाशील 'आस्था और सौन्दर्य' की अवधारणाओं का व्यापक विश्लेषण करती है। इस सन्दर्भ में रामविलास जी के इस कथन को रेखांकित किया जाना चाहिये कि अनास्था और सन्देहवाद का कोई दार्शनिक मूल्य नहीं है, बल्कि यह यथार्थ जगत की सत्ता और मानव संस्कृति के दीर्घकालीन अर्जित मूल्यों के अस्वीकार का ही प्रयास है। उनकी स्थापना है कि साहित्य एवं यथार्थ जगत का सम्बद्ध सदा से अभिन्न है और कलाकार जिस सौन्दर्य की सृष्टि करता है, वह किसी समाज–निरपेक्ष व्यक्ति की कल्पना की उपज न होकर विकासमान सामाजिक जीवन से उसके घनिष्ठ सम्बन्ध का परिणाम है। रामविलास की इस कृति का पहला संस्करण 1961 में प्रकाशित हुआ था। इस संस्करण में दो नये निबन्ध शामिल हैं। एक 'गिरजा कुमार माथुर की काव्य यात्रा के पुर्नमूल्यांकन' और दूसरा 'फ्रांस की राजक्रान्ति तथा मानवजाति के सांस्कृतिक विकास की समस्या'। इन विस्तृत निबन्धों में लेखक ने दो महत्वपूर्ण सवालों पर खासतौर से विचार किया है कि क्या मानव जाति के सांस्कृतिक विकास के लिए क्रान्ति आवश्यक है? और फ्रांस ही नहीं रूस की समाजवादी क्रान्ति भी क्या इसके लिए जरूरी थी? कहना न होगा कि समाजवादी देशों की उथल–पुथल के सन्दर्भ में इन सवालों का आज विशिष्ट महत्व है।

'निराला की साहित्य साधना (जीवनी खण्ड)' में 'निराला के परिवार में अनेक मौतों वाली घटना', अनाथ भतीजों को पालने के लिए भयंकर संघर्ष भरे दिनों और 'भावों की भिडन्त' वाले आन्दोलन तथा 'सिफलिस' से पीडित नायक निराला के 'पतन' वाले दिनों का बड़ा ही मार्मिक विवरण अंकित हुआ है। 'भावों की भिडन्त' लेख के प्रकाशन से युगान्तकारी प्रतिभा का धनी सूर्यकान्त 'बंगाली कविताओं का भाव चुरानेवाला' वतलाया जाकर मजाक का पात्र बन गया था। रामविलास अपने चरित नायक का चित्रण खासतौर से उसके कठिन क्षणों में बड़ी ही अन्तरंगता एवं कलात्मकता से किया है। उनका कलकत्ता जीवन, समन्वय और मतवाला–मण्डल के दिन, निराला उग्र का आपसी ईर्ष्या द्वन्द, सब–कुछ बहुत सजीव रूप से पुस्तक में अंकित किया गया है। वे दिन चूँकि निराला के साथ–साथ छायावाद के उदय काल के भी थे। इसलिए हिन्दी साहित्य का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण इतिहास काल एक बार फिर से हमारे सामने स्पष्ट अभर आता है। इस प्रकार एक व्यक्ति के जीवन नाटक के साथ एक समाज की साहित्यिक क्रान्तिगत विचारधारा रस बनकर औसत साहित्यचेता पाठक तक को पुस्तक में सहज ही मिल जाती है।

रामविलास शर्मा द्वारा रचित कालजयी पुस्तक 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण' में पाँच भाग हैं। पहले भाग में भारत और सम्राज्यवाद के सम्बन्ध में द्विवेदी जी और सरस्वती के लेखकों ने जो कुछ कहा है उनका विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, दूसरे भाग में रूढ़िवाद से संघर्ष, वैज्ञानिक चेतना के प्रसार और प्राचीन दार्शनिक चिन्तन के मूल्यांकन का विश्लेषण है। तीसरे भाग में भाषा समस्या को लेकर द्विवेदी जी ने जो कुछ भी लिखा है उसकी छान–बीन की गयी है। चौथे भाग में साहित्य सम्बन्धी आलोचना का परिचय दिया गया है, पाँचवें भाग में द्विवेदी युग के साहित्य की कुछ विशेषताओं की ओर संकेत किया गया है। बहुत सी समस्यायें जो

द्विवेदी जी के समय में थी आज भी विद्यमान हैं। इसलिए आज के संदर्भ में इस पुस्तक की सार्थकता एवं उपयोगिता और भी बढ़ गयी है।

'परम्परा का मूल्यांकन' प्रगतिशीलता के सन्दर्भ में परम्परा बोध एक बुनियादी मूल्य है फिर चाहे इसे साहित्य के परिप्रेक्ष्य में रखा–परखा जाये अथवा समाज के। दूसरे शब्दों में बिना साहित्यिक परम्परा को समझे न तो प्रगतिशील आलोचना और साहित्य की रचना हो सकती है और न ही अपनी ऐतिहासिक परम्परा से अलग रहकर कोई बड़ा सामाजिक बदलाव सम्भव है लेकिन परम्परायें जो उपयोगी और सार्थक है उसे उसका मूल्यांकन न किये बिना नहीं अपनाया जा सकता। यह पुस्तक परम्परा के इसी उपयोगी और सार्थक की तलाश का प्रतिफलन है। सुविख्यात समालोचक रामविलास शर्मा ने जहाँ इसमें हिन्दू जाति के सांस्कृतिक इतिहास की रूपरेखा प्रस्तुत की है वहीं अपने–अपने युग मे विशिष्ट भवभूति और तुलसी की लोक विमुख काव्य–चेतना का विस्तृत मूल्यांकन किया है। तुलसी के भक्ति–काव्य के सामाजिक मूल्यों का उद्घाटन करते हुए उनका कहना है कि दरिद्रता पर जितना अकेले तुलसीदास ने लिखा है उतना हिन्दी के समस्त नये पुराने कवियों ने मिलकर न लिखा होगा। भवभूति के सन्दर्भ में रामविलास का यह निष्कश्रर्ष महत्वपूर्ण है कि ''यूनानी नाटककारों की देव सापेक्ष न्याय व्यवस्था की जगह देव निरपेक्ष न्याय व्यवस्था का चित्रण शेक्सपियर से पहले भवभूति ने किया और रामायण, महाभारत के नायकों के विषय में यह कि राम और कृष्ण दोनों श्याम–वर्ण के पुरूष हैं।'' वस्तुतः इस कृति में आधुनिक साहित्य के जनवादी मूल्यों के सन्दर्भ में प्राचीन मध्यकालीन और समकालीन भारतीय साहित्य में अभिव्यक्त संघर्षशील जनचेतना के उस विकासमान स्वरूप की पुष्टि हुई है जो शोषक वर्णो के विरूद्ध श्रमिक जनता के हितों को प्रतिबिम्बित करता रहा है।

'भारत में अंग्रेजीराज और मार्क्सवाद' नामक विशाल ग्रन्थ एक तरह से हिन्दी नवजागरण की सामाजिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए इस नवजागरण के बाद वाली मंजिलों की राजनीतिक ऐतिहासिक व्याख्या है। इस ग्रन्थ के अन्तर्गत भारत के इतिहास के विषय में ऐसी क्रान्तिकारी मान्यतायें प्रस्तुत की गयी हैं जो इतिहास का परिचित नक्सा ही बदल देगीं। इसके अतिरिक्त यह ऐतिहासिक ग्रन्थ साहित्य एवं संस्कृति के लिए भी प्रासांगिक है, जैसा कि द्वितीय खण्ड की भूमिका के इस कथन से अन्दाजा लगाया जा सकता है, ''हमारी सांस्कृतिक स्थिति के एक छोर पर करोड़ों आदमियों की निरक्षरता है, दूसरे छोर पर हजारों बुद्धिजीवियों पर अमरीकी संस्कृति का प्रभाव है। क्या संगीत और फिल्में, क्या अर्थशास्त्र और भाषविज्ञान, मनुष्य को नैतिक पतन और प्रगति विरोधी मार्ग की ओर ले जाने वाली प्रवृत्तियाँ सब तरफ दिखाई देती हैं। अर्थतंत्र से लेकर भाषा और संस्कृति तक स्वदेशी की धूरी बनाकर एक शक्तिशाली साम्राज्य विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का निर्माण किया जा सकता है। ऐसा मोर्चा जनवादी क्रान्ति के शेष कर्तव्य पूरे कर सकता है।'' (भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद, पृ0–24)

लब्ध प्रतिष्ठ प्रगतिशील आलोचक रामविलास शर्मा ने 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवं हिन्दी नवजागरण की समस्यायें' पुस्तक में आधुनिक हिन्दी साहित्य के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के जीवन और साहित्य सम्बन्धी जीवन्त तथ्यों को ऐसे रूप में प्रस्तुत किया है कि आज की अनेक समस्याओं का भी समाधान मिल सके। भारतेन्दु युगीन हिन्दी नवजागरण की समस्याओं पर विस्तार से विचार करते हुए इस पुस्तक में यह प्रतिपादित किया गया है कि भारतेन्दु हिन्दी को जातीय परम्परा के संस्थापक हैं और मुख्यतः उनकी बताई हुई दिशा में चलकर ही हमारा साहित्य उन्नति कर सकेगा। पुरानी पत्र–पत्रिकाओं एवं दुर्लभ पुस्तकों में ढके पडे अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों को पहली बार प्रकाश में लाकर डॉ0 शर्मा ने भारतेन्दु का सर्वथा मौलिक चित्र पुनर्निमित किया है, जो बहुतों के लिए चौकाने वाला सिद्ध हो चुका है। दो अध्यायों में भारतेन्दु के नाटकों पर विस्तार से विचार करने के साथ उनकी कविता, उपन्यास, आलोचना, निबन्धकला एवं पत्रकारिता का भी आलोचनात्मक परिचय दिया गया है। इस संस्करण के लिए विशेषरूप से लिखित ''भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरण की समस्यायें शीर्षक एक नये अध्याय ने पुस्तक को और भी संग्रहणीय बना दिया है। वास्तव में भारतेन्दु साहित्य सम्बन्धी सभी पक्षों की प्रमाणिक जानकारी के लिए यह अकेली पुस्तक पर्याप्त है।

'मार्क्स एवं पिछड़े हुए समाज' हिन्दी के सुविख्यात समालोचक, भाषाविद् और इतिहासवेत्ता रामविलास शर्मा का यह महत्तम् ग्रन्थ 'भूमिका' और 'उपसंहार' के अलावा आठ अध्यायों में नियोजित है। इनमें से पहले में उन्होंने आधुनिक चिन्तन के पुरातन श्रोतों, मार्क्स के 'व्यक्तित्व निर्माण' की दार्शनिक पृष्ठभूमि तथा मार्क्स–एंगेल्स की धर्म विषयक स्थापनाओं के प्रति ध्यान आकर्षित किया है। इससे सौदागरी, पूँजी की विशेषताओं के सन्दर्भ में सम्पत्ति एवं परिवार–व्यवस्था की कतिपय समस्याओं का विवेचन हुआ है। तीसरे में, मध्यकालीन यूरोपीय ग्राम समाजों और भारतीय ग्राम–समाजों में भिन्नता को रेखांकित किया गया है। चौथे में प्राचीन रोमन यूनानी समाज और प्राचीन भारतीय समाज में

श्रम–सम्बन्धी दृष्टि–भेद का खुलासा हुआ है। पाँचवें में, मार्क्स–एंगेल्स पर हीगेल के दार्शनिक प्रभाव के बावजूद इतिहास–सम्बन्धी उनकी स्थानाओं में अन्तर को विस्तार से विवेचित किया गया है। ताकि हीगेल के यूरोप केन्द्रित नस्लवादी इतिहास–दर्शन को समझा जा सके। छठा अध्याय मार्क्स, एंगोल्स और लेनिन के जनवादी क्रान्ति–सम्बन्धी विचारों, कार्यो से परिचित कराता है। सातवें में, क्रान्ति के पश्चात् सर्वहार अधिनायकवाद राज्यसत्ता में सर्वहारा पार्टी की भूमिका, फासस्त तानाशाही से लड़ने की रणनीति तथा राज्यसत्ता के दो रूपों–जनतंत्र एवं तानाशाही को अलगकर देखने की माँग है और आठवाँ अध्याय दूसरे विश्व युद्ध के बाद एशियाई क्रान्ति के सन्दर्भ में लेनिन की स्थापनाओं को गम्भीरता में न लेने के कारण साम्राज्य विरोधी आन्दोलन में विघटन का गम्भीर विश्लेषण करता है। संक्षेप में कहें तो रामविलास शर्मा की यह क्रान्ति विश्व पूँजीवाद और उसके सर्वग्राही आर्थिक साम्राज्यवाद के विरूद्ध मार्क्सवादी समाज–चिन्तन की रोशनी में विश्वव्यापी पिछड़े समाजों के दायित्व पर दूर तक विचार करती है, ताकि समस्त मनुष्य जाति को विनाश से बचाया जा सकें।

भारतीय साहित्य और उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि के विभिन्न पक्षों पर 'भारतीय साहित्य की भूमिका' पुस्तक में नौ अध्याय हैं। भारत की रूढ़िवादी पुरोहित वर्ग और पश्चिमी संसार का वैज्ञानिक विचारक समुदाय भारतीय संस्कृति से सम्बन्धित अनेक मुद्दों पर एक मत हैं। दोनों के लिए ऋगवेद ब्राम्हणों के द्वारा रचा हुआ धर्मग्रन्थ है और भारतीय समाज की मुख्य विशेषता है उसकी अपरिवर्तनशील वर्णव्यवस्था। भारत के रूढिवादी नहीं जानते, वे कितना वैज्ञानिक हैं, पश्चिमी संसार के वैज्ञानिक विचारक नहीं जानते, वे कितना रूढिवादी हैं। यह पुस्तक भारतीय साहित्य का संक्षिप्त इतिहास नहीं है। यहाँ भारतीय साहित्य और उसकी सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के कुछ पक्षों पर विचार किया गया है। प्रश्न यह है कि देशी रूढ़िवादियों और पश्चिमी संसार के 'वैज्ञानिक' विचारकों से अलग हटकर ऐसा रास्ता बनाया जायें जिस पर चलते हुए भारतीय साहित्य के और बहुत से पक्षों का वस्तुगत विवेचन किया जा सके। यह पुस्तक उसी रास्ते की शुरूआत है, उसकी आखिरी मंजिल नहीं।

'भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश' के पहले खण्ड की 'भूमिका' की पहली पंक्ति' ''भारत की प्राचीन संस्कृति का अध्ययन वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों में अत्यन्त प्रासंगिक हैं'' और दूसरे खण्ड का अन्त भूमण्डलीकरण और उदारीकरण के विरोध से है। पुस्तक के दूसरे खण्ड को मैं और स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। दूसरे खण्ड में तुर्क आक्रमणों से लेकर भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना और इसके बाद स्वाधीनता प्राप्ति तक सांस्कृतिक इतिहास की अनेक समस्याओं का विवेचन है। यही समस्यायें महत्वपूर्ण हैं, यह मेरा आग्रह नहीं है। ये भी विचारणीय है। डॉ0 शर्मा की स्थापना है कि वास्तव में अधिकांश समस्यायें दूसरों ने प्रस्तुत की है। मैंने उनके दिये हुए तथ्यों के आधार पर अपनी ओर से टीका टिप्पणी भर की है। परिशिष्ट रूप में संस्कृति पर दो–एक अध्याय मूल इतिहास के अन्त में जोड़ दिये जाते हैं। 'भारतीय संस्कृत और हिन्दी प्रदेश' रामविलास शर्मा के जीवनकाल में दो खण्डों में प्रकाशित चौदह सौ सतासी पृष्ठों की उनकी अन्तिम पुस्तक है, जो बीस अध्यायों के कुल एक सौ अट्ठावन अनुभागों में विभाजित है। इस पुस्तक में ऋगवेद से लेकर बीसवीं सदी के अन्त तक के व्यापक काल–खण्ड की भारतीय संस्कृति और उसमें हिन्दी प्रदेश की भूमिका पर विचार किया गया है।

'भारतीय सौन्दर्य बोध और तुलसीदास' में रामविलास शर्मा साहित्य के स्थाई–मूल्यों का अथवा यों कहें कि प्रगतिशील साहित्य, दर्शन एवं कला का अध्ययन करते हुए भारतीय चिन्तन की परम्परा को ठीक–ठीक समझाने की कोशिश करते हैं तथा इसके लिए वह खास करके वैदिक काव्य, भारतीय दर्शन, कला का इतिहास, मध्यकालीन भक्ति साहित्य और उसमें भी तुलसीदास आदि को विचार–विमर्श का आधार बनाते हैं। रामविलास शर्मा की इस पुस्तक में कुल छः अध्याय हैं– 'वैदिक कवियों का सौन्दर्य बोध', 'भारतीय दर्शन और सौन्दर्य बोध', 'नगर सभ्यता और कलाओं का विकास', 'कला इतिहास', कलाओं के इतिहास की समस्या' और तुलसीदास का सौन्दर्य बोध'। परिशिष्ट के पाँच भाग हैं– पहले भाग में 'तुलसी की भक्ति, भक्ति आन्दोलन और तुलसीदास और 'तुलसी साहित्य के सामन्त विरोधी मूल्य' पर विचार किया गया है। दूसरे हिस्से में साहित्य अकादमी में 'लेखक भेंट कार्यक्रम के तहत उनके द्वारा 11 जनवरी 1994 को दिये गये व्याख्यान और श्रोताओं से प्रश्नोत्तर के संवाद संकलित हैं। परिशिष्ट के तीसरे हिस्से में साहित्य अकादमी द्वारा महत्तर सदस्यता प्रदान किये जाने के अवसर पर दिये गये वक्तव्य का संकलन है। चौथे और पाँचवें हिस्से में क्रमशः उनकी प्रकाशित पुस्तकों की सूची एवं प्रमुख शब्दावलियों की अनुक्रमणिका दी गयी है।

भारत रत्न लौहपुरुष
सरदार बल्लभ भाई पटेल

राजू प्रसाद कुसुम
भागलपुर (बिहार)
मो0 : 9386178889

राष्ट्रीय एकता के मसीहा सरदार बल्लभ भाई पटेल एक दृढ़ निश्चयी देशभक्त थे। उनके दृढ़ निश्चय और दूरदर्शिता के परिणाम ने भारत को एकता के सूत्र में बांधा, अन्यथा आज देश की स्थिति कुछ और ही होती। अंग्रेजों की कूटनीति और फूट डालने की कोशिश भारत की आजादी के बाद भी जारी थी। यदि ऐसी विषम परिस्थितियों में भारत को सरदार पटेल जैसे लौहपुरुष का नेतृत्व न मिला होता हो आज भारत छोटी–छोटी कमजोर रियासतों का एक ऐसा देश होता, जिसपर कोई भी क्रूर आक्रांता हमला करके फिर उसे अपने अधीन कर सकता था।

जिस समय देश आजाद होने की घोषणा हुई, भारत में 565 रियासतें थीं और उन 565 रियासतों (देशी राज्यों) पर यहाँ के राजा–राजबाड़ों का अलग–अलग आधिपत्य था। उन रियासतों की सत्ता पर वे 'ब्रह्मा, विष्णु, महेश' की तरह काजिब थे। यही कारण था कि देश की आजादी की घोषणा के बाद भी वे भारतीय संघ (केन्द्र) के साथ एक सूत्र में विलय नहीं करना चाहते थे। 'फूट डालो और शासन करो' की नीति से अंग्रेजों ने षड़यत्र का ऐसा जाल बिछा रखा था कि देश में गृह–युद्ध छिड़ जाय। ऐसी विषम परिस्थिति में सरदार बल्लभ भाई पटेल ने सोचा– 15 अगस्त, 1947 के बाद तो देशी राज्य भी स्वाधीन हो जायेगें। वैसी स्थिति में, उनसे भारतीय–संघ में विलयन के लिए याचना करना तो एक तरह का भिक्षाटन हो जाएगा और वे हमारी याचना को ठूकरा भी सकते हैं। फलस्वरुप उनसे दुश्मनी मोल होगी और हिंसा का सहारा लेना होगा। इससे बेहतर है कि स्वतंत्रता के पूर्व ही उनसे भारतीय संघ में मिल जाने के लिए विनम्रतापूर्वक आग्रह किया जाए।

वाससराय लॉर्ड मांउटबेटन, नेहरु तथा जिन्ना से गहरी सूझ–बूझ के साथ सरदार पटेल ने बातचीत की। वायसराय को एक भारतीय राज्य विभाग खोलना पड़ा और उसके प्रधान सरदार बल्लभ भाई पटेल बनाए गए। इस विभाग का प्रमुख काम–देशी राज्यों की समस्या सुलझाना था। अतः 5 जुलाई 1947 को सरदार पटेल ने रियासतों के प्रति सरकारी नीति का खुलासा करते हुए एक अत्यंत ऐतिहासिक वक्तव्य प्रकाशित किया–

''हमारी खंडित अवस्था और एक होकर मुकाबला न करने की हमारी अयोग्यता का ही परिणाम था कि भारत को आक्रमणकारियों का शिकार होना पड़ा ..... भौगोलिक समीपता, आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक अटूट संबंधों के कारण रियासतों का दायित्व है कि अवशिष्ट भारत के साथ परम्परा मैत्री व सहयोग का वातावरण बनाए रखें। यह देश अपनी परम्पराओं के साथ उनलोगों की विरासत है, जो इस देश में रहते हैं। यह संयोग की बात है कि इनमें से कुछ ब्रिटिश भारत में रहते हैं और कुछ रियासतों में। ..... परन्तु उच्च परम्पराओं और संस्कृति में सब बराबर के साझीदार हैं। हस सभी रक्त, भावनाओं और हितों की समानता में बंधे हैं। हमें कोई भी खंडों में विभाजित नहीं कर सकता। ऐसी रुकाबटें जो, पार नहीं जा सके, हमारे बीच खड़ी नहीं की जा सकती। इसलिए मेरा सुझाव है कि यह अच्छा हो कि हम आपस में बैठकर मित्रों की तरह नियम निर्धारित करलें, अपेक्षाकृत इसके कि हम विदेशियों की भाँति संधि करें। मैं अपने मित्र रियासतों के शासकों और उनकी जनता को अपनी मातृभूमि के प्रति समान निष्ठा से प्रेरित होकर सबके समान हित के लिए मैत्रीपूर्ण और सहयोग की भावना से संविधान–सभा में आने के लिए आमंत्रित करता हूँ''।

सरदार पटेल के इस वत्कव्य का रियासतों के शासकों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। उन्हें चट्टान से भी कठोर सरदार पटेल का हृदय मोम से भी अधिक कोमल लगा।

पुनः 11 अगस्त, 1947 को दिल्ली के रामलीला मैदान में भाषण करते हुए सरदार पटेल ने रियासतों से कहा – ''चार दिन पश्चात् विदेशी सरकार चली जायगी, अतः रियासतें 15 अगस्त तक भारतीय संघ में सम्मिलित हो जाएँ, अन्यथा उनके साथ कठोर व्यवहार किया जाएगा। पटेल की इस चेतावनी का भारी असर हुआ और 14 अगस्त, 1947 तक हैदराबाद, जूनागढ़, काठियाबाड़ तथा कश्मीर को छोड़कर भारत की लगभग सभी रियासतें भारत राज्य में शामिल हो गई।

सरदार पटेल अपनी सूझ–बूझ और कूटनीति एवं आत्मीय शैली से छह सप्ताह के भीतर 565 में से 561 रियासतों को विलय पर विवश कर दिया। चंद दिनों में मिली इतनी सफलता वास्तव में पटेल के विशेष व्यक्तित्व की ही देन थी।

हैदराबाद, कश्मीर, काठियावाड़ तथा जूनागढ़ की समस्या के समाधान के लिए सरदार बल्लभ भाई पटेल को महाभारत के कृष्ण का पार्ट अदा करना पड़ा। उनकी विलक्षण प्रतिभा और अद्‌भूत संगठन शक्ति के समक्ष सबकी हेकरी किरकिरी हो गई, किन्तु नेहरु जी की ढील और गलत आकलन के कारण भारत में सबसे खतरनाक मोड़ केवल एक रियासत की समस्या ने ले लिया; वह है कश्मीर की समस्या! शेख अब्दुल्ला के प्रभाव में आकर नेहरुजी ने कश्मीर के मामलें को सरदार पटेल के रियासत विभाग से अलग कर लिया।

इस प्रकार देश की समस्याओं से निरन्तर जुझने, विषम परिस्थितियों से लोहा लेने तथा अपने साथियों का पूरा सहयोग न मिल पाने, नेहरु जी द्वारा उनसे पैरों के नीचे रौंद देने वाला, वह लौहपुरुष वेहद दुःखी था। धीरे–धीरे उन्हें हृदय रोग ने दबोच लिया। 15 दिसम्बर 1950 ई0 को एकाएक हृदय का दौरा आया और 9 बजकर 37 मिनट पर भारतमाता का वह अनोखा लाल, एकता का शाश्वत प्रतीक अपने क्षणभंगुर शरीर को छोड़कर संसार सागर से विदा हो गया।

बम्बई के 'करमसद' गाँव में 21 अक्टूबर, 1875 को किसान पिता झबेर भाई पटेल और धर्मपरायण माँ लाड़बाई की गोद में वल्लभ भाई पटेल जैसी अमर विभूति का

अभ्युदय हुआ, काँटों की बीच रहकर गुलाब फूल की तरह वे खिले और स्वावलम्बन के सिद्धातों का आलिंगन कर उन्हौंने अपने जीवन का निर्माण किया। प्रतिभाशाली छात्र के रुप अंग्रेजों की प्रतिभा को चुनौती दी, आदर्श वकील के रुप में आजीवन सत्य और न्याय का पक्ष लेते रहे, किसान नेता और गाँधीजी के साथ एक अजेय सत्याग्रही के रुप में भारत की स्वतंत्रता एवं अखंडता के लिए संघर्ष करते हुए उन्हौंने आधुनिक भारत का नवनिर्माण किया, सत्य को अपने जीवन का मंजिल समझा।

भारतीय स्वाधीनता के उषाकाल में उपप्रधानमंत्री के पद के साथ–साथ गृह विभाग एवं आकाशवाणी जैसे विभाग को संभालकर सरदार साहब ने हम भारतवासियों के लिए जो मार्ग प्रशस्त किया, वह अनन्तकाल तक हमें आलोकित करता रहेगा।

बारडोली–सत्याग्रह के सरदार, गुजरात केसरी, स्वाधीनता आन्दोलन के नेता और भारत की एकता के रक्षक भारत रत्न लौहपुरुष सरदार बल्लभ भाई पटेल आज हमारे बीच नहीं हैं, मगर देश के प्रति किए गए उनके महान कार्य सदैव हमारे लिए प्रेरणा का स्त्रोत बने रहेंगे। पटेल जैसे वीर सपूतों पर भारतमाता को हमेशा गर्व रहेगा ।

(21 अक्टूबर 1875) राष्ट्रीय एकता के मसीहा देश भक्त सरदार बल्लभ भाई पटेल की 139वीं पावन जयन्ती के उपलक्ष्य में संभाव्य परिवार का सश्रद्ध नमन!

राष्ट्र पिता
महात्मा गाँधी

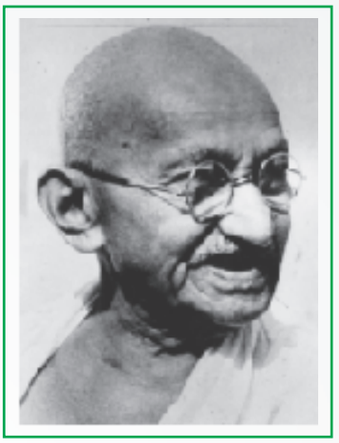

[चल पड़े जिधर दो पग डगमग, चल पड़े कोटि पग उस ओर,
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि, गड़ गए कोटि दृग उसी ओर।]

(2 अक्टूबर 1869) सत्य एवं अहिंसा के पुजारी राष्ट्र पिता महात्मा गाँधी की 145वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में संभाव्य परिवार का सश्रद्ध नमन!

साहस एवं निर्भीकता की प्रतिमूर्ति
लाल बहादुर शास्त्री

(2 अक्टूबर 1804) लाल बहादुर शास्त्री की 110वीं जयन्ती की उपलक्ष्य में
संभाव्य परिवार का सश्रद्ध नमन!

संभाव्य : विश्वग्राम की प्रभावी और चर्चित पत्रिका

अभिनव अरुण
वरिष्ठ उद्घोषक, आकाशवाणी वाराणसी
मो0–09415678748

''संभाव्य'' का जुलाई अंक पढ़ा। अधिक सुसज्जित, अधिक समृद्ध अंक यह तसल्ली दिलाता है कि पत्रिका अपने साहित्य पथ पर सही दिशा में आगे बढ़ रही है। जैसा कि आमंत्रण में संपादक महोदय ने कहा है कि यह पत्रिका नि:संदेह सामाजिक सरोकारों की अभिव्यक्ति का श्रेष्ठ साहित्यिक मंच है। अंक में सामग्री अधिक वैविध्यपूर्ण है और पूर्व की अपेक्षा हिंदी साहित्य में सक्रिय अधिकाधिक रचनाकार इसमें अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं। अंक इन सबका तहे दिल से स्वागत करता भी प्रतीत होता है। मानसिक उत्थान में योग की भूमिका, सुमित्रानंदन पन्त के काव्य में विम्ब विधान, आधुनिक हिंदी कविता में अभिव्यक्त सांप्रदायिक सद्भावना, पत्रकारिता एक कौशल, कामायनी में लज्जा और सौन्दर्य की अभिव्यंजना विषयक आलेख एवं शोध गहन एवं विचारपरक बन पड़े हैं।

रजनी मोरवाल, डॉ0 अनिल मिश्र, दिव्या शुक्ला और दीप्ति शर्मा की कवितायें सत्यम शिवम् सुन्दरम् के निकष पर खरी हैं। आरम्भ में ही डॉ0 हरिवंश राय बच्चन की कविता यहाँ सब कुछ बिकता है आज की विषमताओं पर करारा व्यंग्य करती है तथा पत्रिका की सम्पादकीय दृष्टि को उजागर करती है। इस विशेष प्रस्तुति के लिए साधुवाद स्वीकारें। पी.एन.जायसवाल की कहानी ''नदी चुप थी'' सामयिक और संदेशपरक है। ''चम्पा का दर्द'' उकेरने में कहानीकार अजीत कुमार भी सफल रहें हैं। अन्य स्तम्भ प्रस्तुतियां भी ''संभाव्य'' पूर्णता प्रदान करती है। अपने उद्देश्य में सफल इस त्रैमासिक की सुदीर्घ सशक्त सफल यात्रा हेतु असीम शुभकामनायें। आभार समस्त सम्पादकीय और प्रबंधन परिवार के प्रति ऐसी उद्देश्यपरक अप्रतिम पत्रिका को संयोजित कर हम तक पहुँचाने के लिए।

संभाव्य की उत्कर्षता

शम्भुनाथ झा
प्राचार्य, महिला कॉलेज, भागलपुर
मो0–9905424890

'संभाव्य' हिन्दी त्रैमासिक जो लेखकों, समीक्षकों एवं कवियों की 'प्रकृति और जीवन जगत' इन दोनों की परस्पर–प्रतिक्रिया के गुम्फों से तैयार हुई है। इससे सिद्ध होता है कि यह कलात्मक अभिव्यक्ति किसी उच्च मनोवैज्ञानिक स्तर पर आविर्भूत है जो हम पाठकों के हृदय को रंजित कर प्रभावोत्पादक गुण अतिशय उत्कर्ष को प्राप्त कराती है।

संभाव्य : सकारात्मक सोच

श्री राधेश्याम राय
प्राचार्य, मारवाड़ी पाठशाला, भागलपुर
मो0–9430912183

'पत्रकारिता: एक कौशल' में श्री दयानन्द जायसवाल 'संस्थापक' जी ने पत्रकारों, पत्रिकाओं, हिन्दी भाषा की अक्षुण्णता एवं सामाजिक दायित्व बोध को अपनी कौशलता पूर्ण इन कथनों में जो समेटा है बहुत ही प्रसंशनीय एवं समारात्मकसोच है। पत्रिकाएँ और पत्रकार जनता के हितों के संरक्षक हैं, लोकसत्ता के अभिभावक हैं। पत्रकारों की लेखिनी समाज की प्रतिगामी शक्तियों का सामना ही नहीं करती बल्कि मानव और मानवता के अधिकारों के संरक्षण में अभूत पूर्व योगदान भी दे रही है। भाषा को जीवन्त रखने में, उसमें चेतना शक्ति भरने में और उसे समृद्ध बनाने में पत्रिकाओं का जबरदस्त दायित्व होता है।

लोकवाणी

जीवन्त संभाव्य

संजय वर्मा 'दृष्टि'
मनावर, धार (उत्तर प्रदेश)

संभाव्य पत्रिका बेहतर है इसका श्रेय संपादक एवं प्रबन्ध मंडल को जाता है। कारण यह है कि विशेषांक हो या समाचार कुशल संपादन ही इसका प्रतीक है । कई पत्र/पत्रिकाएँ आज बन्द होने की कगार पर है। रचनाकारों का सम्मान और ध्यान इसमें सम्पादक रखते हैं । इसलिए यह संभाव्य हम देख रहे हैं । दूरस्थ गाँवों में रहने वाले लेखक सोचते होंगे कि उनकी रचनाएँ क्या छपी होंगी? किन्तु संभाव्य में रचनाएँ छपती हैं और सम्पादक महोदय द्वारा सभी छपी रचनाओं के साथ पत्रिका नि:शुल्क रचनाकारों को भिजवाना नहीं भुलते, यही तो श्रेष्ठ कर्मो से संपादक महोदय ने रचनाकारों का दिल जीत लिया। जीवन पर्यन्त हम रचनाकार आदरणीय संपादक महोदय के आभारी रहेंगे। ईश्वर से कामना करते हैं सबको साहित्य ज्ञान एवं शब्दों को रचने के लिए संभाव्य जैसी पत्रिका का आधार प्रदान करें ताकि नई पीढ़ी के रचनाकार उभर कर सामने आ सके, फलस्वरूप साहित्य कभी विलुप्त नहीं हो।

लोकवाणी

डॉ. संजय बी. आसोदरिया
हिन्दी विभागाध्यक्ष,
श्रीमती आर. आर. पटेल महिला कॉलेज,
एसट्रोन सोसायटी, अमीन मार्ग,
राजकोट (गुजरात)
संपर्क सूत्र : 9586505380

संपादकश्री,
संभाव्य,
भागलपुर।

सादर नमस्कार।

विषय : संपादित ई–पत्रिका की प्रतिक्रिया एवं संशोधनात्मक आलेख प्रकाशन हेतु।

आपके द्वारा संपादित 'संभाव्य' पत्रिका का अप्रैल – 2014 का अंक पढ़ा। नि:शुल्क आई.एस.एस.एन. नंबर वाली साहित्यिक पत्रिका प्रकाशित करने के लिए पूरी टीम को साधुवाद। आपका संपादन श्रेष्ठ है। कविताएँ एवं गज़ल हृदयग्राही थी, तो आलेख चिन्तनात्मक । समग्र रूपसे आपका यह अंक पठनीय, प्रशंसनीय तथा संग्रहणीय रहा। आप अपने संपादकियों के माध्यम से पाठकों एवं साहित्यिकों को गहन एवं गंभीर सामग्री दे रहे हैं, वह आपकी अध्ययनशीलता तथा ज्ञान की गहराई को दर्शाती है। स्वागत योग्य बात यह है कि आप अपनी ज्ञानात्मक उपलब्धियों को नि:शुल्क एवं उदारता से बाँट रहे हैं।

हिन्दी दिन को मद्देनज़र रखते हुए मैंने 'देश की एकता की कडी राष्ट्रभाषा हिन्दी' नामक एक आलेख तैयार किया है, जो आपकी ई–पत्रिका में प्रकाशित हेतु भेज रहा हूँ। आशा रखता हूँ कि आप इसे आने वाले अंक में छापकर अनुगृहीत करेंगे।

धन्यवाद !

www.sambhavya.com

संभाव्य
प्रिंटिंग प्रेस, भागलपुर